रजनीगंधा

* महाविद्यालय का मुखपत्र : चतुर्थ पुष्प *

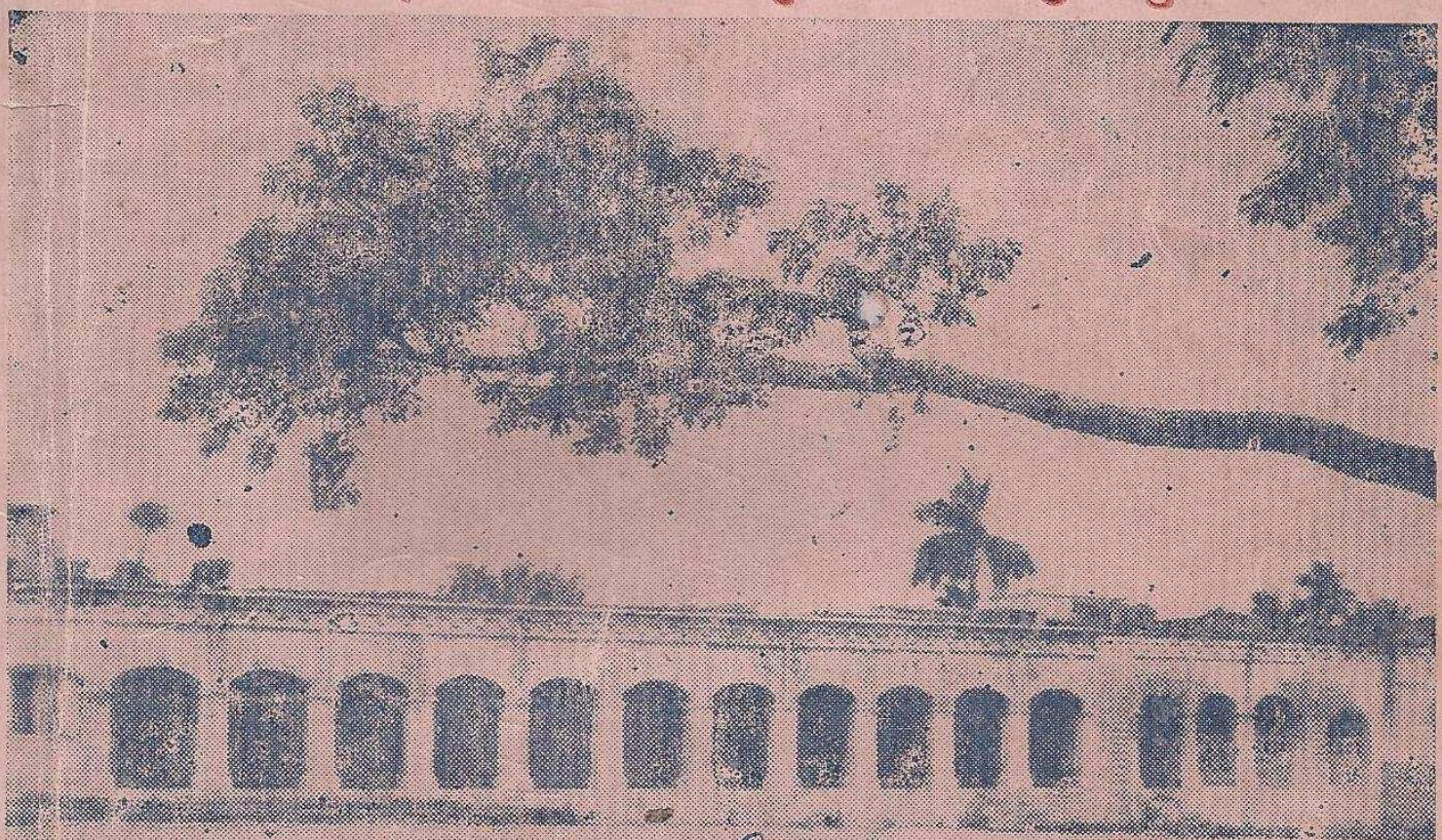

जनक महारोड डॉ० [illegible] महिला कॉलेज

मधुबनी (बिहार)

The woods are lovely, dark and deep,
But I have promises to keep;
And miles to go before I sleep—
And miles to go before I sleep.

: Robert Frost

गहन, सघन, मनमोहक वनतरु, मुझको आज बुलाते हैं,
किन्तु किये जो वादे मैं ने याद मुझ आ जाते हैं।
अभी कहाँ आराम बदा, यह मूक निमन्त्रण छलना है—
अरे, अभी तो मीलों मुझको, मीलों मुझको चलना है!

भावानुवाद : बच्चन

माननीय कुलपति,
का० सिं० दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय
को सादर,
[signature]
17.7.91

रजनी गंधा

महाविद्यालय के २०वें वार्षिकोत्सव पर प्रकाशित

सम्पादक :

प्रो० रघुनन्दन यादव : मैथिली विभाग

प्रो० काजी मोहम्मद जावेद : उर्दू विभाग

प्रो० शत्रुघ्न पंजियार : अँग्रेजी विभाग

डॉ० घनश्याम महतो : संस्कृत विभाग

प्रधान सम्पादक :

प्रो० विनोद कुमार ठाकुर 'विश्वास' : हिन्दी विभाग

झुमक महासेठ डॉ० धर्मप्रिय लाल

महिला महाविद्यालय, मधुबनी

जे० एम० डी० पी० एल० महिला कॉलेज, मधुबनी

अपने

२०वें वार्षिक समारोह

के अवसर पर उपस्थित

सभी मान्य अतिथियों

का

अभिनन्दन करता है।

डॉ० रजनीबाला अग्रवाल
प्रधानाचार्या

डा० महावीर प्रसाद
मन्त्री,
उद्योग विभाग
बिहार सरकार, पटना

संदेश

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि जे० एम० डी० पी० एच० महिला कॉलेज, मधुबनी अपने बीसवें वार्षिकोत्सव पर अपने मुखपत्र 'रजनीगंधा' का चतुर्थ पुष्प खिलाने जा रहा है।

मैं इस कॉलेज से सम्बद्ध रहा हूँ और जानता हूँ कि कॉलेज-परिवार विकास के पथ पर निरन्तर अग्रसर है।

मैं वार्षिकोत्सव की सफलता की कामना करता हूँ।

महावीर प्रसाद

मंगनी लाल मंडल
मन्त्री,
जल संसाधन (लघु सिंचाई)
बिहार

मंगल कामना

अपने गृह - जिला - मुख्यालय स्थित झुमक महासेठ डॉ० धर्मप्रिय लाल महिला महाविद्यालय के चतुर्दिक विकास को देखकर मैं प्रभावित हूँ।

महाविद्यालय के २०वें वार्षिक समारोह और इस अवसर पर प्रकाश्य पत्रिका 'रजनीगंधा'— दोनों की सफलता की मंगल कामना करता हूँ।

मंगनी लाल मण्डल

नवल किशोर शाही
राज्य मन्त्री (उ० शि०)
मानव संसाधन विकास विभाग
बिहार, पटना

शुभकामना

प्रिय प्रधानाचार्या जी,

'रजनीगंधा' पत्रिका के चतुर्थ अङ्क के प्रकाशन के शुभ अवसर पर मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ। रचनात्मक आलेखों से भरा - पूरा वह हो।

माँ सरस्वती सबों की बुद्धि कुशाग्र करें।

भवदीय—
नवल किशोर शाही

डॉ० जनार्दन प्रसाद सिंह
कुलपति,
ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय,
दरभंगा

कामना

नारी-शिक्षा और जागरण की दिशा में यह महिला महाविद्यालय अपनी भूमिका निभाएगा – यही मेरी कामना है।

लोहिया के शब्दों में भारत का आधा हिस्सा अभी भी गुलाम है। यह आधा हिस्सा स्त्रियों की आबादी का है। आजादी के बाद भी औरतें गुलाम रही हैं। गुलामी खत्म हो – नारी-शिक्षा का यही मूल उद्देश्य होना चाहिए। इस दिशा में यदि कोई भी महिला महाविद्यालय सफल हो, तो उसकी सार्थकता है।

जनार्दन प्रसाद सिंह

हमारे संस्थापक सचिव

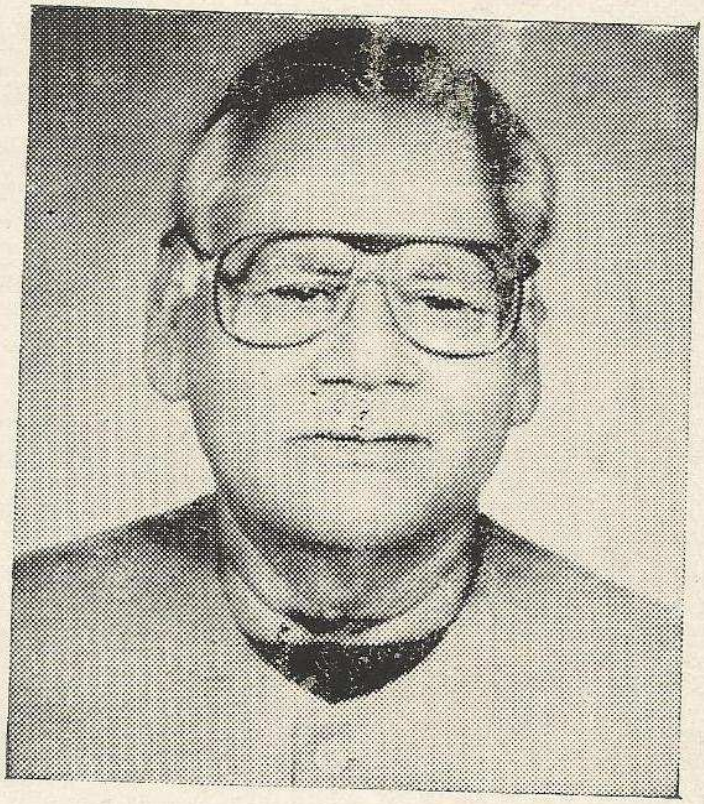

डॉ० धर्मप्रिय लाल

नहीं फूलते कुसुम मात्र राजाओं के उपवन में,
अमित बार खिलते वे पुर से दूर कुंज - कानन में।
समझे कौन रहस्य ? प्रकृति का बड़ा अनोखा हाल,
गुदड़ी में रखती चुन-चुनकर बड़े कीमती 'लाल'।

: दिनकर

हमारे मुख्य मन्त्री

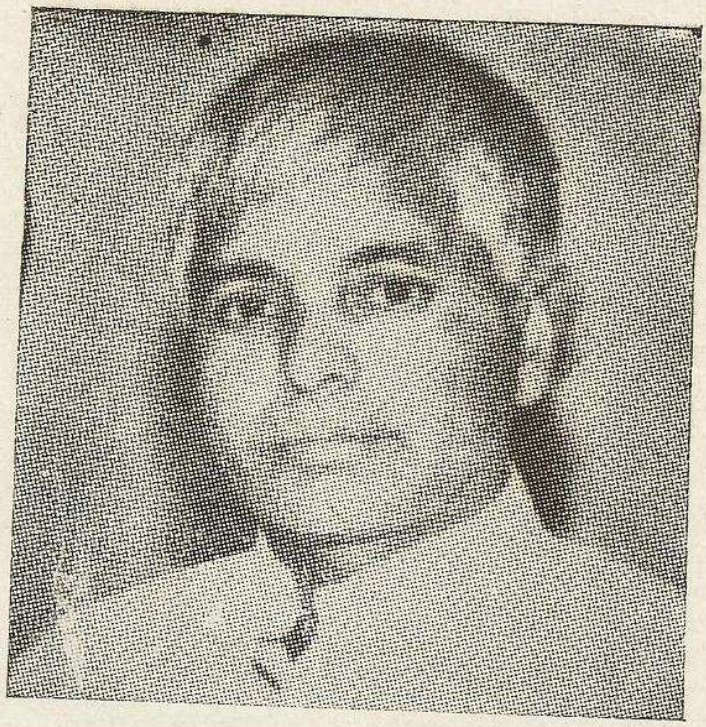

श्री लालू प्रसाद

विक्रमी पुरुष, लेकिन, सिर पर
चलता न छत्र पुरखों का धर,
अपना बल - तेज जगाता है,
सम्मान जगत से पाता है,
सब इसे देख ललचाते हैं, कर विविध यत्न अपनाते हैं।

: दिनकर

हमारे मुख्य अतिथि

डॉ० महावीर प्रसाद

(उद्योग मन्त्री, बिहार)

उड़ते जो झंझावातों में, पीते जो वारि प्रपातों में,
सारा आकाश अयन जिनका, विषधर भुजंग भोजन जिनका,
वे ही फणिबन्ध छुड़ाते हैं, धरती का हृदय जुड़ाते हैं।

: दिनकर

हमारे विशिष्ट अतिथि

श्री नवल किशोर शाही

(राज्य मन्त्री, मानव संसाधन विकास विभाग, बिहार)

जाओ, ध्रुव से ध्रुव तक, यह गीत सुनाओ,
जो भूल गये हैं उनको याद दिलाओ;
समझाओ नासमझों को, प्रेम सिखाओ;
कोई न पिये, तब भी तुम अमृत बहाओ !

: रमाकान्त पाठक

हमारी प्रधानाचार्या

डॉ० रजनीबाला अग्रवाल

मैं न वह, जो स्वप्न पर केवल सही करते,
आग में उसको गला लोहा बनाती हूँ;
और उस पर नींव रखती हूँ नये घर की,
इस तरह दीवार फौलादी उठाती हूँ।

: दिनकर

इन दाताओं को गर्व है महाविद्यालय पर.....

स्व० लक्ष्मी नारायण महासेठ

श्री महाबीर महासेठ

श्री शुभ नारायण महासेठ

: बेलाही (मधुबनी)

श्री नसीब लाल पंजियार

: बाबूबरही (मधुबनी)

श्री शिव नारायण चौधरी

: मधुबनी

नारी शिशु कल्याण परिषद

: दरभंगा / मधुबनी

जो नर आत्मदान से अपना जीवन - घट भरता है,
वही मृत्यु के मुख में भी पड़कर न कभी मरता है।

: दिनकर

महाविद्यालय को गर्व है इन छात्राओं पर...

जिला-स्तरीय वाद-विवाद प्रतियोगिता में शील्ड जीतने वाली छात्राएँ :

छाया कुमारी / किरण सिंह

जिला स्तरीय खेल-कूद प्रतियोगिता में विजयी छात्राएँ :

१०० मीटर दौड़	:	सरोज कुमारी/रेणु कुमारी
२०० मीटर दौड़	:	सरोज कुमारी/रेणु कुमारी
४०० मीटर दौड़	:	सरोज कुमारी/संगीता कुमारी/मधुबाला सिन्हा
चक्का - प्रक्षेपण	:	रानी कुमारी/मधुबाला सिन्हा
भाला - प्रक्षेपण	:	यास्मीन आरा
ऊँची कूद	:	हेमा कुमारी/संगीता कुमारी/सविता कुमारी
लम्बी कूद	:	रेणु कुमारी/सविता कुमारी
गोला - क्षेपण	:	रानी कुमारी/यास्मीन आरा/हेमा कुमारी

गत परिषद/विश्वविद्यालय-परीक्षाओं में महाविद्यालय में प्रथम :

इन्टर कला : कविता कुमारी कर्ण/इन्टर विज्ञान : निभा कुमारी/इन्टर वाणिज्य . विनीता कुमारी

स्नातक कला (पुराना पाठ्यक्रम) : कुमारी चन्दा ठाकुर

स्नातक कला प्रथम खण्ड (पास) : भारती कुमारी

,, ,, (प्रतिष्ठा) : सुनीति कुमारी

,, विशेष प्रतिष्ठा : अर्चना रानी

सांस्कृतिक कार्यक्रम में विजयी छात्राएँ :

सुगम संगीत	:	मालिनी कुमारी/शास्त्रीय संगीत : ममिता/लोक गीत : ज्योति कुमारी
नृत्य	:	सीमामणि/ज्योत्स्ना
अभिनय	:	नूतन कुमारी/सुभद्रा/निकहत सीमा

कर्त्तार बनाता जब कर्त्ता तब कर्म पुरस्कृत होता है।
यों बड़ा - बड़ा करतब भी अदने हाथ तिरस्कृत होता है।

: किशोर

कहाँ क्या है

● हिन्दी प्रभाग

नव लेखन : एक दृष्टि	१	५०	यह है मेरा भारत देश
काव्य - प्रयोजन	५	५०	कितना सुन्दर 'रजनी' नाम
भारत में बेरोजगारी	७	५१	बिजली
मेरा आकाश	९	५१	इम्तहान
हँसिकाएँ	१०	५२	मैं पीता नहीं हूँ
क्षणिकाएँ	११	५६	अपनत्व का बोध
विवशता	१२	५७	भाषा
कौटाणु - सभा	१३	५७	प्रमुख भाषाओं के प्रमुख कवि
स्वस्थ कैसे रहें	१७	५८	एक अदद व्यंग्य का सवाल
विज्ञान और विश्वशान्ति	२०	६१	सामाजिक तनाव
दस, तीन	२१	६४	छल - छन्द
मोक्ष	२३	६५	वोट - भिक्षुक
हिंदिग्लिश पढ़िए	२४	६६	शिक्षा - व्यवस्था
भूगोल-शिक्षण के उद्देश्य	२५	६९	चाय
वह	२९	७१	बिजली रानी
भूलें	३१	७३	दहेज
जैनेन्द्र के नाम मृणाल का पत्र	३२	७५	संगीत
जीवन हमारा	३५	७७	धर्म की दार्शनिक व्याख्या
कल्पना और यथार्थ	३६	८२	अर्थ
ओवर-एक्सपोज्ड	३६	८२	अमर्थ
शून्यात्मक बजट - प्रणाली	३७	८३	विद्या
लेखनी	४२	८३	हँसगुल्ले
दर्द का रिश्ता	४३	८४	फिल्मी गीतों में अलंकार - योजना
शिक्षा में भ्रष्टाचार	४८		

● मैथिली प्रभाग

मानव ओ ओकर भाषा १
पनिभरनी ४
सावधान ५
अकच्छ छी ६
कुर्सी - स्तुति ८
मेताजीक चिन्ता ८
सीख ९
मारीक जीवन १०

● संस्कृत प्रभाग

संस्कृतभाषाया: महत्वम् १

● English Section

1 Afgan Power in Mithila
5 The Glory that was Mithila
6 Rajnigandha
7 Black Hole
9 For Greying Girls
10 Our College
11 Sugar Industry in India
13 A Fruitful Dialogue
14 A Song for Hypocricy

● Urdu Section

1 Shatranja Ki Chaal
4 Beete Dinon Ki Yaaden
5 Aazad Nazma

एक नजर

डॉ० लोहिया ने कहा था—'नर और नारी का स्नेहमय सम्बन्ध बराबरी की नींव पर हो सकता है।' विडम्बना यह है कि ऐसा सम्बन्ध किसी भी समाज में आज तक नहीं बन सका है, और तब तक बन भी नहीं सकता, जब तक समाज पुरुष - प्रधान है। गैर-बराबरी समाप्त हो, इसके लिए आवश्यक है कि नारी में जागरण हो और जागरण तब तक नहीं आ सकता, जब तक शिक्षा का अभाव है। नारियों में, विशेषकर मधुबनी जैसे पिछड़े क्षेत्र की नारियों में, उच्चतर शिक्षा का अभाव समाप्त हो, इसके लिए भाव की आवश्यकता थी और जब डॉ० धर्मप्रिय लाल डॉ० रजनीबाला अग्रवाल, श्री बलदेव पूर्वे जैसे शिक्षा-प्रेमियों में यह भाव आया, तब इस महिला महाविद्यालय की स्थापना की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी। सचमुच, भाव के आने पर अभाव शर्मिन्दा हो जाता है – चाह होने पर राह निकल ही आती है। वैसे, यह दुहराने की आवश्यकता नहीं कि इस महाविद्यालय का इतिहास आलोचनाओं एवं विरोधों का इतिहास रहा है परन्तु जॉर्ज हरबर्ट ने कहा है—'सबसे संक्षिप्त उत्तर है - करके दिखाना'; और इस महाविद्यालय के संस्थापकों एवं सहयोगियों ने उन आलोचनाओं एवं विरोधों का उत्तर इसी रूप में दिया है। स्थापना-काल से लेकर अंगीभूतीकरण तक के मार्ग में कई बार आँधियाँ चलीं, तूफान आये, परन्तु माँझी कुशल हो तब मंजिल नहीं मिले—ऐसा भी कहीं होता है! आज सम्पूर्ण क्षेत्र के लोगों को, विशेषकर बच्चियों को मैट्रिकुलेशन के बाद पढ़ाई 'ड्राप' करा देने को विवश हो जानेवाले अभिभावकों को सन्तोष है कि पूर्व में 'दान' से चल रहे इस महिला महाविद्यालय को उन्होंने 'वरदान' के रूप में पाया है। हमारे माननीय कुलपति डॉ० जनार्दन प्रसाद सिंह की यह कामना कि नारी-शिक्षा और जागरण की दिशा में यह महिला महाविद्यालय अपनी भूमिका निभाएगा, महाविद्यालय - परिवार को दायित्व - बोध कराती रहेगी।

'रजनीगंधा' के इस चतुर्थ पुष्प के सम्बन्ध में मुझे कुछ नहीं कहना है—यह भी नहीं कि चाहता हुआ भी मैं इसे 'रुप,रंग अरु वास' नहीं दे सका। समय काफी कम मिला; नतीजतन पुरानी परन्तु अनछुई पंखुड़ियों को सेट करने की मजबूरी हो गयी और इसलिए बहुत-सी नयी पंखुड़ियों को 'एँडजस्ट' भी नहीं कर सका। पँखुड़ियों की मौलिकता का दावा भी मैं नहीं कर सकता, क्योंकि बड़ी-बड़ी पत्रिकाओं के सम्पादक भी चोर-वृत्तिवाले रचनाकारों की रचनाएँ प्रकाशित कर चुकने के बाद खेद व्यक्त करते रहते हैं। हाँ, यह बात अवश्य है कि जिन रचनाओं को आप स्तरीय नहीं मानेंगे, वे भी महाविद्यालय-पत्रिका में स्थान पाने की हकदार इसलिए हैं कि वे रचना-जगत्

की ओर प्रथम कदम उठानेवाली छात्राओं की हैं और कुछ रचनाओं में तो भाव - विह्वल हृदय की अत्यन्त ही सहज अभिव्यक्ति है। उदाहरण के लिए पृष्ठ ५० पर प्रकाशित नीलम कुमारी की वह कविता देखी जा सकती है जो प्रधानाचार्या डॉ० रजनीबाला अग्रवाल को समर्पित है।

अन्त में, मैं अपने सम्पादकीय सहकर्मी प्रो० शत्रुघ्न पंजियार, प्रो० रघुनन्दन यादव, प्रो० काजी मोहम्मद जावेद और डॉ० घनश्याम महतो के साथ उन सभी व्यक्तियों को धन्यवाद देना आवश्यक समझता हूँ जिनका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सहयोग इस मुखपत्र के प्रकाशन में मिला है और सच मानें, यह धन्यवाद - ज्ञापन महज औपचारिकता नहीं है !

त्रुटियों के लिए क्षमा - याचना के साथ,

विनोद कुमार ठाकुर विश्वास

हिन्दी प्रभाग

नव लेखन : एक दृष्टि

● डॉ० धर्मप्रिय लाल

संस्थापक सचिव

आज हिन्दी जगत में नवलेखन, नयी कविता, अकविता कविता, प्रयोगवाद, प्रयोगशीलता आदि कितने ही नये शब्द आलोचकों द्वारा प्रयुक्त होने लगे हैं जिनका सम्बन्ध १९३०-५१ की सीमारेखा से लेकर अद्यावधि हिन्दी साहित्यिक रचना से है। ये सभी शब्द ऐसी ध्वनि देते हैं कि आज जो कुछ लिखा जा रहा है उसमें भाव भाषा, अनुभूति, अभिव्यक्ति, उद्देश्य—सभी दृष्टियों से नयापन है और पुराने निकष पर या पुरानी साहित्यिक मान्यताओं के आधार पर इनकी समीक्षा नहीं होनी चाहिये। इस मत के समर्थक १९५१ से लेकर १९८७ तक की रचना को इसके पूर्व की रचनाओं से सर्वथा भिन्न मानते हैं और ऐसा मानने के पीछे उनके तर्क भी हैं; जैसे—३०-३५ वर्षों में जो रचनाएँ पाठकों के समक्ष आई हैं उनमें कलाकारों का वैयक्तिक अहम्वाद प्रमुखता से देखने को मिलता है। स्वचेतनता के प्रति कलाकारों का झुकाव आज की रचना में देखा जा सकता है। इसे कुछ लोग आधुनिकता की दृष्टि और आधुनिक भावबोध की प्रवृत्ति भी कहा देते हैं। भारतेन्दु युग से काव्य रचना में जो एक नयापन आने लगा था उसमें भावाभिव्यक्ति का माध्यम क्रमशः सूक्ष्म होता प्रतीत होता रहा है, जो छायावाद युग में अधिक स्पष्ट हो गया था। नवलेखन के नाम पर मिलने वाली रचना में इस माध्यम को अधिक सूक्ष्म किया जाने लगा, परिणामस्वरुप अधिकसंख्यक रचनाएँ प्रतीक पद्धति से प्रस्तुत हुईं। आज का कलाकार भाग्य और कर्म के झगड़े की उलझन में पड़ा है। वह अप्रत्याशित रुप से घटित घटनाओं की उपलब्धि को परिस्थितिजन्य बेवशो का परिणाम मान कर वर्त्तमान सामाजिक ढाँचे के प्रति ही विद्रोही भाव अपनाता अपनी रचना में मिलता है। परिणाम है कि नवलेखन के नाम से लिखी गई रचनाओं में घटना-क्रम या इतिवृत्त कम, आघात-प्रत्याघात का प्रयास अधिक निखरा मिलता है।

इन तथ्यों के आधार पर नवलेखन या नयी कविता प्रजातंत्र के स्वच्छन्द मनोभाव वाले युग में अत्यधिक स्वच्छन्द मनोभाव का द्योतन करने लगी है और स्वीकृत मानव-मूल्यों की उपेक्षा कर नये ढंग से इसके मूल्यांकन में संकोच का अनुभव नहीं करती है। इस प्रकार

नयी कविता में जिन तत्वों का अवलोकन आज के साहित्य-समीक्षक करते हैं वे हैं पूर्ण आधुनिकता; भाव में आधुनिकता, चिन्तन में आधुनिकता, अभिव्यक्ति-शैली में आधुनिकता, प्रयुक्त शब्दों के अर्थबोध में भी आधुनिकता। दूसरा तत्व है स्पष्ट, उन्मुक्त, नग्न यथार्थ का समर्थन जिसमें सभी वर्जनाओं-निषेधों के प्रति पूर्ण उपेक्षा का भाव मिलता है। सामाजिक या वैयक्तिक, जीवन के लिये जो भी विधि-निषेध निर्मित हैं, सबों के मूल में आदर्श प्रतिष्ठित है। नव लेखन या नयी कविता इनके प्रति आखें बन्द रखना चाहती है। इसे पसन्द है मुक्त यथार्थ। तीसरा तत्व इन रचनाकारों या रचनाओं में जो मिलता है वह है भावना की उपेक्षा चिन्तना की अधिकता। आज जब तक किसी बात को बुद्धि स्वीकृत नहीं करती तब तक वह कलाकार का वर्ण्य विषय बन ही नहीं पाती है। चौथे तत्व के समर्थन में कहा जा सकता है कि विज्ञान की उपलब्धियों ने हमारे दृष्टिकोण में अत्यधिक परिवर्त्तन कर दिया है। हमारी दृष्टि यथार्थ को देखने में अधिक परिष्कृत हो गई है। ऐसी स्थिति में नवलेखन का समर्थक सभी प्रकार के मूल्यों और परिस्थिति में अपने दायित्व को समझने के लिए प्रयत्नशील हो गया है।

इन चारों ही तत्वों ने मिलकर १९५७ के बाद की रचना को एक ऐसा कलेवर दिया है कि इसे वादों के भांडार से चयन कर निकाले गये किसी भी वाद की परिधि में डालना संभव नहीं देख आलोचकों ने एक नया वाद-नवलेखनवाद या नयी कविता के वाद का नाम दे दिया है। इसे आज हिन्दी साहित्य का इतिहास भी स्वीकृत कर रहा है। यह एक निर्विवाद सत्य है कि परिवेश में परिवर्तन के साथ ही कविता की रचना प्रक्रिया में और कभी-कभी कवियों की चिन्तनधारा में भी परिवर्त्तन होता है। प्रत्येक नये युग ने पुरातन की अवज्ञा की है और नया बन कर जो आया है वह स्वयं अनागत के आते ही उपेक्षित होकर नवेपन को जन्म दे देता है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में समय, कलाकृति और भावधारा को लेकर अनेक परिवर्त्तन आये। आदिकाल की काव्य पद्धति पूर्व मध्यकाल में उपेक्षित हो गई। उत्तर मध्यकाल और आधुनिक काल के बीच विभाजक रेखा का अंकन कठिन नहीं रहा है और न है। रीति काल तक परिवर्त्तन की गति में उतनी तीव्रता नहीं मिलती है, जितनी द्विवेदी युग के बाद हिन्दी साहित्य के रचना-क्षेत्र में मिली। इसके कारण कुछ बाहरी हैं और कुछ कलाकारों के भीतर के। एक लहर की तरह छायावाद आया क्योंकि प्रथम विश्वयुद्ध की विभीषिका से संत्रस्त कवि हृदय कोमलता-सुकुमारता की कामना करने लगा। इसका प्रभाव भारत पर भी पड़ा। भारत गाँधीवाद का झंडा लेकर अपनी स्वतंत्रता के लिए आन्दोलन कर रहा था। स्वतंत्रता, स्वच्छन्दता कर भावना ने कवियों को परम्परा के विरोध में खड़ा कर दिया, पर स्वच्छन्दता और अहम् की प्रतिष्ठा की भावना इतनी तीव्र हो उठी कि

अनेक समर्थ साहित्यकार अपने को केन्द्रबिन्दु बनाकर एक साहित्यिक घेरा निर्मित करने लगा। उपन्यासस्राट प्रेमचन्द ने अपने को किसी वाद का संस्थापक-समर्थक नहीं घोषित किया, पर प्रगतिशील लेखकों के संघ ने उन्हें प्रगतिवाद का पुरोधा बना दिया। राष्ट्रकवि दिनकर ने स्वयं को प्रगतिवाद का समर्थक कवि घोषित करवा लिया। यह प्रगतिवाद क्या है, स्वयं एक समस्या है। आलोचकों ने कहना प्रारभ किया कि राजनीति का साम्यवाद ही साहित्य जगत में प्रगतिवाद बन गया। यह कितना सत्य है- इसकी समीक्षा आलोचक 'द्वन्द्व गीत' और उर्वशी पढ़ने के बाद करें तो उत्तम होगा। स्वयं रश्मिरथी में जाति और कर्म का संघर्ष दिखाकर दिनकर जी ने वही काम किया जो महर्षि दयानन्द जैसे आस्तिकवादी व्यक्ति ने बिना प्रगतिवादी संज्ञा धारण किये ही इनके बहुत पहले किया था। पर जब वादों का ज्वर उठा ही, तो दिनकर जी या उनके समर्थक कैसे पीछे रहते! उनके नाम से प्रगतिवाद चल पड़ा और उन्होंने प्रगतिवाद पर अपने मन्तव्य भी व्यक्त किये। उन्होंने बाद में अपने को प्रगतिवादी कवि न मानकर इतना ही स्वीकार किया कि छायावाद में जो कमी थी उसकी प्रतिक्रिया के रूप में नयी काव्यरीति आई। यह रीति एक प्रकार से छायावाद की अतिशय कल्पनाशीलता और गेयता के विरोध में थी। यह प्रगतिवाद भी साहित्यिकों को अधिक दिनों तक रिझा नहीं सका। समर्थ साहित्यकारों का अहम् उन्हे विवश करने लगा था कि वे कुछ अपने नाम से प्रचलित करें। भारत की यह पुरानी प्रथा है कि यहाँ व्यक्ति के महत्व को सदा ऊँचा स्थान मिलता रहा है। दर्शन के क्षेत्र में सिद्धान्तों का परिचय उनके संस्थापकों के नाम से कराया जाता है। शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, बल्लभाचार्य, निम्बार्क स्वामी, चैतन्य महाप्रभु, अरविन्द, विवेकानन्द आदि नामों की ख्याति इसी का परिणाम है। बहुत दूर नहीं, हिन्दी के आधुनिक काल में भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, प्रेमचन्द युग के बाद कुछ समय तक व्यक्ति गौण रहे, प्रयोगवाद के जन्म के साथ ही अज्ञेय फिर उभर कर सामने आ गये। अज्ञेय जी की बढ़ती कीर्ति ने नकेनवाद को जन्म दे दिया। 'न' से प्रारंभ होने वाली संज्ञा के तीन व्यक्तियों का दल प्रगतिशीलता में मतभेद उत्पन्न कर बौद्धिक विवाद में उलझ गया। इनके बाद के नवोदित कलाकारों ने अपने अपने नाम से वाद चलाने में अपनी अक्षमता से इनकार नहीं किया, पर अपनी रचना के लिए नये नाम अवश्य खोजने लगे। इसी प्रयास में जन्मे नवलेखन, नयी कविता, अकविता कविता आदि शब्द।

हमने ऊपर स्पष्ट किया है कि परिवेश के परिवर्तित होते ही काव्य की विस्तृत प्रचलित शैली में या अभिव्यक्ति के साधक तत्वों में परिवर्तन होता रहा है, अतः नवलेखन या नयी कविता तो हर युग में मिलती रही है। इस नाम से कुछ नयेपन के बोध का प्रयास कोई महत्व नहीं रखता है। महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाट्य गीति काव्य आदि की रचना के लिए

कवि में अनवरत साधना की आवश्यकता होती है। आज कवियों को अनेक उलझनों के बीच से गुजरना पड़ रहा है। उनके सामने भविष्य अनिश्चित-सा है। अपनी इन्हीं भावनाओं से अनुप्राणित अपने व्यक्तित्व की स्वतंत्र सत्ता की रक्षा करते हुए, ये कलाकार सूक्तियों, नीति वचनों आदि की तरह छोटी-छोटी रचनाओं, क्षणिकाओं आदि की रचना में संलग्न हैं। इनकी रचना-पद्धति को भी किसी 'वाद' की संज्ञा चाहिये, अतः नव-लेखन जैसे शब्दों का प्रचलन हुआ। इनकी रचना के सम्बन्ध में जो सिद्धान्त वाक्य उल्लिखित किये जाते हैं उनमें निम्नलिखित तथ्य स्पष्ट हैं—परम्परा के प्रति अवज्ञा, नये-पन की ललक, अपने अहम् की रक्षा, समय की उन प्रवृत्तियों के प्रति गहरा व्यंग्य जो मानवता के सहज विकास में बाधक रही हैं, अपने अन्तर की उलझनों का प्रकाशन तथा नियति के नियंत्रण के विरोध में संघर्ष की भावना, साथ ही भाषा पर व्याकरण की जटिलता की उपेक्षा।

नयी कविता या नवलेखन की समीक्षा इन्हीं तथ्यों को उजागर करती है। कोई भी साहित्यकार या कवि अपने शुद्ध साहित्यकार रुप में छन्दों के मूलभूत तत्व, ध्वनियों के सन्तुलन और उनके भावानुरुप होने से इन्कार नहीं कर सकता है। पदों का लालित्य, उपमा-रुपक का आकर्षण, अन्त्यानुप्रास, लक्षणा शक्ति और ध्वनि—ये काव्य के अनिवार्य तत्व हैं। प्रत्येक युग की कविता का इनसे अनिवार्य सम्बन्ध रहता है। नव-लेखन या नयी कविता में ये सारे तत्व वर्तमान हैं। नवीनता है केवल परिवेश में। इसके लिये एक नयी काव्यधारा का नया वाद बनाना कोई विशेष महत्व नहीं रखता है, बल्कि परिभाषा, मान्यता आदि की नयी उलझन ही पैदा करता है। आज का काव्य युग लघु कविता या छोटी कविता का युग है जिसमें भावना कम, बौद्धिकता अधिक है।

ख्याति वह प्यास है जो कभी बुझती नहीं। अगस्त्य ऋषि की तरह वह सागर को पीकर भी शान्त नहीं होती।

: अज्ञात

काव्य-प्रयोजन

● डॉ० रजनीबाला अग्रवाल

प्रधानाचार्या

मानव-जीवन का लक्ष्य है 'प्रेय' और श्रेय' की प्राप्ति। 'प्रेय' के उपरान्त आता है 'श्रेय'। 'प्रेय' के द्वारा ऐन्द्रिक बुभुक्षा की सन्तुष्टि होती है। आहार, निद्रा, भय आदि के साथ 'प्रेय' जुड़ा है और दया, क्षमा, करुणा, मानवता, प्रेम आदि का सम्बन्ध है श्रेय से। सामान्य मानव 'प्रेय' के लिए अहर्निश चिन्तित रहता है और अहर्निश प्रेय-प्राप्ति-कामना के वशीभूत विभिन्न समस्याओं, महत्त्वाकांक्षाओं, उलझनों, कुण्ठाओं और प्रश्नों के जाल में उलझता रहता है। यह उलझन कभी उसे सुखद प्रतीत होती है और कभी दुखद। ऐहिक सुख की कामना से प्रेरित मनुष्य 'प्रेय'-प्राप्ति के उपरान्त या बिना उसकी प्राप्ति किए श्रेय के पथ पर अग्रसर हो जाता है। वस्तुतः 'प्रेय' 'भव-बन्धन' को दृढ़ करता है और 'श्रेय' भव-बन्धन-मुक्ति' एवं विभु-विराट के साथ एकात्म भाव की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करता है। इस दशा को प्राप्त करने के लिए योगी योग-साधना करते हैं, कर्मयोगी निर्लिप्त भाव से कर्मयज्ञ में प्रवृत्त होते हैं, विद्वत्समाज ज्ञानार्जन हेतु साधनारत होते हैं और कला साधक विभिन्न कलाओं की साधना में अपने सजग क्षणों को लगा देते हैं।

कला-साधकों की कई कोटियाँ हैं; कुछ स्थूल उपकरणों के साहाय्य से अपनी कला में निपुणता पाते हैं और कुछ के साधन सूक्ष्म होते हैं। सूक्ष्म साधनों में ध्वनि-स्वर-तान और भावना की गणना होती है। सर्वोत्कृष्ट कला-साधना वह है, जिसमें भावना के उपकरणों से साधक अपनी कला-सिद्धि में सफलता पाता है। यह कला है 'काव्य-कला'। काव्य-कला बन्धन नहीं, मुक्ति - प्रदायिका है। काव्यशास्त्रियों ने काव्य के प्रयोजनों में यश, अर्थ-व्यवहार-ज्ञान शिवेतरक्षय, शत्रुभय-नाश और मधुर उपदेश गिनाये हैं। आचार्य विश्वनाथ के अनुसार 'काव्य' 'ब्रह्मानन्द सहोदर' आनन्ददायक है। कुछ लोग काव्य को आचार शास्त्र - साधक और कुछ इसे आचार-नीति-मर्यादादि से परे मानते हैं। साधारणतः काव्य-मात्र अपनी अनुभूतियों की सहज अभिव्यक्ति मानी गयी है। इसका कोई प्रयोजन नहीं है।

'काव्य' की अनेक परिभाषाएं दी गयी हैं। उसके अनेक प्रयोजनों का उल्लेख किया गया है, काव्य से संभावित लाभों की विस्तृत चर्चाएं भी हुई हैं पर यथार्थ में ललित कलाओं में श्रेष्ठ काव्य कला का एक ही प्रयोजन है—'बन्धन-मुक्ति,' जिसे किसी न किसी रूप में सभी मनीषी स्वीकार करते हैं। काव्य की प्रेरणा के लिए जो भी कारणभूत तत्त्व हों, पर यह तो स्वीकृत तथ्य है कि भीति, प्रीति, रीति, नीति और स्तुति की

भावना से ही कवि काव्य-सर्जना में प्रवृत्त होता है। भीति में भय-मुक्ति, प्रीति में वासना-मुक्ति, रीति में स्वार्थ-मुक्ति और नीति में संकीर्णता-मुक्ति तथा स्तुति में भौतिक आकर्षण - मुक्ति का उद्देश्य निहित रहता है।

'भय-मुक्ति' का उदाहरण ऋग्वेद के इन्द्र-परक मंत्र में, वासना-मुक्ति का उदाहरण 'बिहारी' जैसे कवियों की कलात्मक रचना में, स्वार्थ-मुक्ति और संकीर्णता - मुक्ति के उदाहरण कबीर, रहीम गिरिधर आदि की कविताओं में और भौतिक आकर्षण-मुक्ति के उदाहरण स्तुतिपरक गीतों, पदों या कविताओं में मिलते हैं, जिनकी रचना सूर, तुलसी जैसे काव्यकारों ने की है।

कविता का जन्म भी उसी मनोदशा या भाव में होता है जब व्यक्ति अपने व्यष्टि की परिधि से निकलकर समष्टि को परिधि में समा-कर एकाकार हो जाता है। काव्यशास्त्रियों ने इसी भावदशा को 'साधारणीकरण' की संज्ञा दी है। 'साधारणीकरण' एक प्रकार से 'विश्वात्मवाद' की पहली सीढ़ी है। यदि किसी रचना के द्वारा मनुष्य किसी व्यक्ति या किसी समूह की भावना से जुड़ता है तो वह रचना कला-त्मक रचना नहीं कही जा सकती। कवि व्यक्ति होता है। वह जब कभी कुछ लिखता है, 'मैं, वह, तुम' जैसे सर्वनामों का प्रयोग करता है, परन्तु ये सर्वनाम यथार्थ में सर्वनाम होते हैं।

काव्य का प्रयोजन, उद्देश्य या लक्ष्य ऊपर के तथ्यों से स्वतः सिद्ध होता है कि कवि वैयक्तिक बन्धन - मुक्ति के क्रम में भावाभि-व्यक्ति में वाणी-माध्यम से जो प्रयास करता है—वही वस्तुतः कविता या काव्य है। यही कारण है कि आचार्य विश्वनाथ जैसे साहित्यशास्त्रियों ने काव्य रस को ब्रह्मानन्द सहोदर आनन्ददायक मानकर रस को "रसो वै सः" अर्थात् स्वयं ब्रह्म को रस-रुप स्वीकार किया है।

आज काव्य-रचना के नाम पर जो अभिनव प्रयास हो रहे हैं, मूल में वे भी इसी उद्देश्य की पूर्त्ति के प्रति सजग दीखते हैं, पर व्याख्या के क्रम में प्रगति, प्रयोग, नवीन कविता आदि के लुभावने शब्दों का प्रयोग कर देते हैं, पर ये सभी केवल अपने अन्तर्लोक में स्थित होकर वहाँ किसी विराट भावना के साथ साक्षात्कार करते हैं और तभी उनकी अभिव्यक्ति कविता का रुप ग्रहण कर पाती है।

साहित्य का इतिहास सिद्ध करता है कि कभी किसी वासनालिप्त कवि ने वासना के क्षणों में किसी उत्तम काव्य कृति का सर्जन नहीं किया है, यहाँ तक कि 'रीति काल' का कवि भी तभी वरेण्य कवि बना, जब उसने विशुद्ध कला की उपासना की।

कविता न तो प्रचार-माध्यम है और न वीर पूजा के लिए उपयुक्त साधन। कविता तो आत्मा-आत्मा के बीच की वह सूक्ष्म कड़ी है जो सबों को एक सूत्र में बाँधकर ऐसी तन्मयता उत्पन्न करती है जो सभी दुखों से निवृत्ति देकर अलौकिक आनन्द में निमग्न कर देती है। काव्य-कला की उत्कृष्टता और उपादेयता का यही रहस्य है।

भारत में बेरोजगारी

● चेतना

प्रथम वर्ष विज्ञान

किसी देश की जनशक्ति कुल जनसंख्या के को कहतें हैं, जो कार्यकारी आयु वर्गों —१२ से ५९ वर्ष—के बीच रहता है। इस दृष्टि से किसी देश की कार्यशील जनसंख्या के एक सुनियोजित विकास एवं उपयोग को जनशक्ति-नियोजन कहा जा सकता है। जनशक्ति नियोजन का सामान्य उद्देश्य बेरोजगारी को कम करके रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना समझा जाता है। यह ठीक है कि रोजगार-वृद्धि जनशक्ति-नियोजन का प्रमुख एवं अन्तिम उद्देश्य है, परनु मात्र रोजगार-वृद्धि को जनशक्ति-नियोजन नहीं कहा जा सकता है। जनशक्ति का मूल उद्देश्य मानवीय संसाधनों का चहुँमुखी विकास करना है। जनशक्ति-नियोजन एक ओर आर्थिक नियोजन को परिपक्वता प्रदान करता है तथा दूसरी ओर मानवीय मूल्यों को प्रदान करते हुए विकास कार्यों में सुदृढ़ता लाता है।

जनशक्ति-नियोजन के अन्तर्गत विभिन्न व्यवसायों में श्रम की मांग एवं पूर्ति के बीच सामन्जस्य की स्थापना का प्रयास किया जाता है। जिन व्यवसायों में श्रम की न्यूनता होती है, उनमें प्रोत्साहनों द्वारा श्रम-शक्ति को आकर्षित किया जाता है तथा जिन व्यवसायों में श्रम का आधिक्य होता है, उनमें हतोत्साहनों द्वारा श्रम की पूर्ति घटायी जाती है।

जनशक्ति के आवश्यक तत्व इस प्रकार हैं—

(१) राष्ट्रीय स्तर पर नियोजन की आवश्यकता।

(२) आर्थिक नियोजन का विकास।

(३) एक **स्थायी, परन्तु स्वतंत्र संस्था** द्वारा सर्वेक्षण कार्य।

(४ नियोजन तंत्र की संगठनात्मक संरचना को अर्थव्यवस्था के अनुकूल बनाये रखना।

(५) जनशक्ति-सम्बन्धी माँग एवं पूर्ति के विस्तृत एवं समेकित लेखा-जोखा की तैयारी।

(६) देश में उपलब्ध जनशक्ति का विस्तृत आधार पर वर्गीकरण।

(७) जनशक्ति-नियोजन सम्बन्धी कार्यक्रमों का समय-समय पर मूल्यांकन।

(८) नियोजन तंत्र अथवा संस्था को उच्च सत्ता का सहयोग।

(९) राष्ट्रीय स्तर पर अपनाये गये कार्यक्रमों का अन्य स्तरों पर अपनाये गये कार्यक्रमों से समन्वय और विभिन्न संस्थाओं में स्वारी सम्पर्क।

(१०) जनशक्ति का आवश्यकता के अनुरुपों राष्ट्रिय स्तर पर प्रशिक्षण।

(११) श्रमशवित-नियोजन के सभी पहलूओं पर समान रुप से बल।

इन तत्वों के उचित **क्रियान्वयन के** सहारे जनशक्ति-**नियोजन के माध्यम से रोजगार** के अवसरों में वृद्धि कर बेरोजगारी को कम किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में भारतीय योजना आयोग के ये शब्द द्रष्टव्य हैं : 'विकास एक प्रकार से रोजगार-अवसरों के विस्तार का दूसरा नाम है।'' लेकिन विडम्बना यह है कि हमारी योजनाएँ न तो अवशिष्ट बेरोजगारी का समाधान कर सकी हैं और न श्रम-शक्ति में नये प्रवेशकों को रोजगार दिलाने में समर्थ रही है। सच तो यह है कि भारतीय आयोजन की सबसे बड़ी कमजोर कड़ी इसका रोजगार पक्ष ही है।

हमारी सबसे बड़ी भूल यह रही है कि हमने आर्थिक विकास के अर्थ, उत्पादन में वृद्धि और रोजगार के विस्तार के लक्ष्य को प्रति व्यक्ति उत्पादन बढ़ाने के लक्ष्य से अलग बनाये रखा। इस प्रकार एक तरफ योजना आयोग रोजगार की ब्यूह-रचना से अनभिज्ञ बना रहा तो दूसरी ओर उद्योगपति वर्ग विवेकीकरण के नाम पर यंत्रीकरण और नव प्रदर्शनों में संलग्न रहा, जिसका परिणाम यह हुआ कि सामाजिक स्थिरता लक्ष्य से भटकती गयी और रोजी-रोटी से निराश जन-शक्ति आर्थिक नियोजन के प्रति अपना विश्वास खो बैठी।

भारत में जनशक्ति-नियोजन के लिए विकास सम्बन्धी नीति में परिवर्तन आवश्यक है ताकि बढ़ती हुई श्रमशक्ति के लिए समुचित लाभप्रद रोजगार के अवसर जुटाए जा सकें। सरकार की रोजगार नीति इन निर्देशक सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए :

(१) विनियोग के ढाँचे में परिवर्तन—चूँकि भारत विकास की स्फूर्ति अवस्था प्राप्त कर चुका है, अर्थात् देश में सामाजिक उपरि पूँजी और भारी उद्योग का आधार तैयार हो चुका है, इसलिए यह अधिक उचित होगा कि भविष्य में विनियोग उन उद्योगों में किया जाय जिनमें विनियोग-रोजगार-अनुपात कम हो। इस दृष्टि से नया विनियोग अनिवार्य उपभोक्ता-वस्तु-उद्योगों में किया जाना चाहिए, जिससे दो लाभ होंगे—एक तरफ रोजगार बढ़ेगा तो दूसरी तरफ बढ़ती हुई कीमतों को नियंत्रित किया जा सकेगा।

(२) छोटे उद्योगों को प्रोत्साहन—बड़े उद्योगों की अपेक्षा छोटे उद्योगों को प्रोत्साहन मिले, क्योंकि ये अधिक रोजगारमूलक होते हैं।

(३) तकनीक के चुनाव में सतर्कता—नयी तकनीकों में श्रम विभाजन का प्रभाव अधिक होता है, इसलिए इनका प्रयोग करने से पूर्व रोजगार-फैलाव एवं रोजगार-फैलाव सम्बन्धी प्रभावों का पूर्ण अध्ययन कर लेना चाहिए। संक्षेप में श्रम-प्रधान तकनीक को बढ़ावा देना चाहिए।

(४) छोटे नगरों में विकास-केन्द्रों की स्थापना तुलनात्मक रूप से बड़े नगरों की अपेक्षा छोटे नगरों को विकास-केन्द्रों के रूप में विकसित किया जाए। इससे औद्योगीकरण के दुष्परिणामों से छुटकारा मिलेगा तथा रोजगार में वृद्धि हो सकेगी।

(५) सरकारी आर्थिक सहायता का आधार—विभिन्न उद्योगों अथवा इकाइयों को दी जानेवाली आर्थिक सहायता भविष्य में उनकी उत्पादन-मात्रा पर आधारित न करके, अतिरिक्त रोजगार-निर्माण पर आधारित की जानी चाहिए।

(६) शिक्षा-प्रणाली में आमूल परिवर्तन—भारत में औद्योगीकरण के लिए प्रशिक्षित मानवशक्ति की जरूरत है, न कि मैट्रिक और बी० ए० पास व्यक्तियों की। शिक्षा रोजगार-मूलक और व्यवसाय-प्रधान होनी चाहिए।

(७) ग्रामीण क्षेत्र में अल्प रोजगार—ग्रामीण क्षेत्र में फैली अदृश्य बेरोजगारी को दूर करने के लिए नये सिरे से योजनाएँ बनाई जाएँ ताकि समस्या का शीघ्र समाधान हो सके।

(८) संगठनात्मक सुधार—प्रत्येक राज्य में जनशक्ति-नियोजन हेतु अलग से विभाग खोले जायँ जो एक तरफ केन्द्रीय संगठन से, तो दूसरी ओर जिला-स्तर पर कार्यरत इकाइयों से सम्पर्क और समन्वय बनाये रख सकें।

भारतीय परिवेश में सरकार को इन नीति-निर्देशक सिद्धान्तों का पालन करते हुए श्रम-शक्ति का नियोजन करना चाहिए ताकि बेरोजगारी को कम कर मानवीय संसाधनों का चतुर्दिक विकास संभव हो।

मेरा आकाश

● प्रो० पुरोबी दत्ता

संगीत विभाग

इतना बड़ा तो नहीं था मेरा आकाश,
लेकिन रोशनी से भरा था
और नीला था,
जिसमें सितारे चमकते थे

मेरी बगिया में
फूल ही फूल थे,
आँगन खुशियों से भरा था --
तब लोग
तंगदिल नहीं थे

लोग तंगदिल नहीं थे,
एक खुलापन था,

सहजता ही सहजता थी
दूरियाँ नहीं थीं—
थकान भी नहीं

लेकिन अब
एक ऊब है—
ऊब में थकान है
किसी से कोई आशा नहीं,
न कहीं से कुछ पाने की उम्मीद
जैसे समय ठहर गया है
दूर किसी पड़ाव पर
कल कुछ फैसला करने को

सुन्दरता को बाहरी आभूषण की आवश्यकता नहीं, बल्कि जब वह अनाभूषित है, तभी सर्वाधिक आभूषित है।

: थॉमसन

हँसिकाएँ

● प्रो० विनोद कुमार ठाकुर 'विश्वास' हिन्दी विभाग

● टेंथ पेपर (उत्तर-पुस्तिकाओं की जाँच)
के पुनीत अवसर पर
प्राध्यापकों के भी भाव
इस कदर बढ़ने लगे हैं
कि नेताओं के बेटे भी शाम-ओ-सहर
उन्हें झुककर प्रणाम करने लगे हैं !

● नेताजी खुश हैं
कि उनके इकलौते बेटे ने
पहले चांस में ही प्रथम श्रेणी पायी है।
वे खुद तो
थर्ड चांस में थर्ड डिवीजन पा सके थे,
लेकिन होनहार बेटे ने
कुल की कितनी प्रतिष्ठा बढ़ायी है !

● परीक्षा में प्रथम श्रेणी पाने पर
नेता-पुत्र की पीठ टीचर ने ठोंकी—
'शाबाश, बेटे !
मुझे उम्मीद है
कि बी. ए. में भी फर्स्ट आइएगा ।'
'श्योर, सर'—नेता-पुत्र ने यकीन दिलाया—
'लेकिन आप भी परीक्षा के वक्त
मेरी सीट पर पहुँच जाइएगा !'

क्षणिकाएँ

● प्रो० शिशिर कुमार कर्ण हिन्दी विभाग

● मैं वसीयत करता हूँ—
कुछ करो
कि कोई आग कहीं राख में दबकर
राख में तबदील न हो जाए ।
मैंने तुम्हारे भीतर
आग देखी,
इसलिए उसको सुलगा दिया,
वरना अपनी खिचड़ी के लिए
मेरी आग ही कम न थी !

● दरवाजे के बाहर झाँकल,
भीतर झाँकल !
'ऐ जी, अन्दर कौन पड़ा है ?'
'.....मुरदे हैं हम,
अपनी कब्रों में रहते हैं;
तुमसे मतलब ?'

● जब मैं न रहूँ,
तुम रहना,
वरना
लोग कहेंगे—
अपने साथ वह
सारी अच्छाइयाँ ले गया ।

लघु कथा

विवशता

● प्रो० प्रभात कुमार सिन्हा इतिहास विभाग

गंगा बाबू से मेरा बहुत पुराना परिचय नहीं था। इतना मैंने जान लिया था कि आज के युग में उनके जैसा सिद्धान्तवादी और आदर्शवादी व्यक्ति का मिलना कठिन था। जब कभी उनसे भेंट होती तो देश में व्याप्त भ्रष्टाचार अराजकता, भाई-भतीजावाद, शिक्षा के गिरते स्तर, परीक्षाओं में कदाचार, पैरवी आदि पर वे अफसोस और चिन्ता प्रकट करते। सचमुच, राष्ट्र के प्रति उनकी गहरी सोच का मैं कायल था।

मगर एक दिन चिलचिलाती धूप में गंगा बाबू को महाविद्यालय-परिसर का चक्कर लगाते देख मेरे आश्चर्य की सीमा न थी। मैंने आगे बढ़कर उनका अभिवादन किया, लेकिन वे बड़े बदहवास दिखे। "... श्रीमान्जी, आप इस कड़ी धूप में इधर कैसे ? सब कुछ ठीक तो है न ? क्या किसी का नामांकन कराना है ?"- मैंने चिन्तित हो पूछा।

"अरे नहीं, साहब ! आप तो जानते ही होंगे, मेरे बेटे ने बी० ए० की परीक्षा दी है। दरअसल, उसी की कॉपी के सिलसिले में आया हूँ।"- गंगा बाबू ने सपाट शब्दों में कहा।

"... मगर आप और बेटे की पैरवी !"—मैंने अविश्वास से कहा। माथे का पसीना पोंछते हुए गंगा बाबू बोले -"जानते ही हैं आप कि आजकल तो लड़के परीक्षा नहीं देते, गोया उनके अभिभावक ही परीक्षा देते हैं। अब मेरे बेटे ने पढ़ाई नहीं की तो मुझे तो दौड़ना ही पड़ेगा न !"

"सो तो ठीक है, मगर आप .. आ। तो इन सबके खिलाफ हैं न !"

मेरे लिए उनके तर्कों को पचाना मुश्किल था। वे बोले—'मैं चोरी, पैरवी के खिलाफ तो जरुर हूँ, मगर इनसान ही हूँ न, भगबान तो नहीं।"—गंगा बाबू ने खीझते हुए आसमान की ओर ताका और फिर चलते बने।

मैं किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो वहीं खड़ा रह गया। तन्द्रा तब भंग हुई, जब विभूतिजी ने टोका-"दिन में सपना देख रहे हैं, क्या प्रभात जी ?"

मैं चौंक - सा गया। मैं समझ नहीं पा रहा था, गंगा बाबू की खीझ मेरे बार-बार टोके जाने पर थी या अपने नालायक पुत्र को अकर्मण्यता पर, या फिर अपने आदर्शों को ताख पर रखने की विवशता पर !

कीटाणु - सभा

● प्रो० मीना झा

जन्तुशास्त्र विभाग

नगर के गन्दगीराम मार्केट में पिछले सप्ताह आयोजित सभा सचमुच असाधारण थी। टी० बी० त्रिपाठी, खाँसी खरे, सर्दी श्रीवास्तव, मलेरिया मुखर्जी, चेचक चौबे, फाइलेरिया पाण्डेय—सब के सब चिन्तित! या खुदा, हम तो कहीं के नहीं रहे! और अध्यक्ष बने अमरीकी प्रतिनिधि कैंसर कैनेडी ने धीरज बँधाया·····

गत सप्ताह, शनिवार की आधी रात को, गन्दगीराम मार्केट के गड्ढे में सर्वश्री टी० बी० त्रिपाठी, खाँसी खरे, सर्दी श्रीवास्तव, मलेरिया मुखर्जी, चेचक चौबे, फाइलेरिया पाण्डेय आदि सदस्यों की उपस्थिति में रोग-प्रसारक कीटाणु संघ की एक असाधारण सभा हुई। इस सभा की अध्यक्षता अमरीकी नवागन्तुक श्री कैन्सर कैनेडी कर रहे थे। सभा में हुए विचार-विमर्श को नीचे दिया जाता है।

टी० बी० त्रिपाठी—खेद के साथ सूचित करना पड़ता है कि मेरे मुख्य पथ-प्रदर्शक खाँसी खरे तथा सर्दी श्रीवास्तव ने सहयोग करना छोड़ दिया है। ये लोग चरित्र-भ्रष्ट हो गए हैं। डाक्टरों के बहकावे में आकर इन लोगों ने महान पारम्परिक आदर्शों का त्याग कर दिया है, मुझसे विमुख हो गए हैं। फिर भी मैं अपनी राह पर अकेला ही चलकर गरीबों—दुर्बलों की मुक्ति का संकल्प ले चुका हूँ। पूँजीपतियों के साथ मेरी साझेदारी नहीं हो सकती, क्योंकि, सज्जनो, मित्रता या बैर बराबरी में ही निबहती है। फिर भी मैं अति-वादी नहीं। उच्च वर्ग के जिस व्यक्ति के साथ एक बार मैंने मित्रता की है, उसे प्रतिष्ठा के साथ अन्तिम सांस तक निबाही है। व्यवधान उत्पन्न करनेवालों को भी मेरी शक्ति का पता है।

खाँसी खरे—बन्धुओ, श्री त्रिपाठी ने मुझ पर अनावश्यक आरोप लगाये हैं। कोई भी व्यक्ति अपनी शक्ति के अनुसार ही कार्य कर सकता है, अतः मेरी विवशता मेरी उदा-सीनता नहीं मानी जानी चाहिए। आप जानते हैं कि मेरी आवश्यकता लोगों को प्रायः आए दिन होती ही है। पर मैं क्या करु? महँगी के इस जमाने में मेहमानदारी भी कठिन हो गई

है। पहले मैं महीनों रह सकता था। लोग सज्जन थे, सहनशील थे, भूखे रहकर भी अतिथि का स्वागत करते थे। और अब? अब मुँह से मुझे कुछ कहते तो नहीं, पर आधुनिक फैशन के नटखट छोकरों को मेरे रहने के ही कमरे में सुला देते हैं। इनके कपड़े-लत्ते बंबइया ऐक्टरों की तरह होते हैं। नाम भी पुराने जुबान पर नहीं चढ़ाते—डेक्वाडिन, क्रोसिन, विक्स; और जरा देखिए तो ··· ग्लाइकोडिन टर्प वसाका ····। इनसे तो वास्कोडिगामा मेसैचुसेट्स ही ज्यादे हल्के और फायदेमन्द नजर आते हैं। आप ही बताएँ, जब इनके नाम ही बम की तरह हैं तो उछलकूद कैसी होगी! मैं इनके मारे दो-तीन दिनों से ज्यादा नहीं टिक पाता। आजकल मेहमानों को भगाने के भी बड़े शिष्ट तरीके निकल गये हैं। आप तो जानते ही हैं—Fish and visitors stink in three days. यह समय का फेर है। लोग मेरी जिद को जानते हैं, लेकिन अहंकारी इतने हैं कि मीठी बात भी नहीं कर सकते। वे धकिया कर मुझे कोने में करना चाहते हैं, बिना भोजन मुझे ये लड़के सुखाकर मार डालना चाहते हैं, लेकिन शहद-मिश्री के वचन बोल कर दरवाजे तक नहीं लाना चाहते। अरे, मैं पुराने जमाने का आदमी, भाव का भूखा हूँ, प्यार से मुलायम हो जाता हूँ! खुद ही दया आती है, अपना बिस्तर समेट कर बाहर हो जाता हूँ। जो नया है, वही सत्य है क्या? वही अच्छा है क्या? नहीं। कालिदास ने कहा है कि केवल पुरानी होने से ही कोई चीज खराब नहीं होती, केवल नयी होने से ही कोई चीज अच्छी नहीं हो जाती। रहीम बेवकूफ नहीं था जो कह गया—

खैर, खून, खाँसी खुशी, बैर, प्रीति, मदपान।
रहिमन दावे ना दवै, जानत सकल जहान॥

सर्दी श्रीवास्तव—अध्यक्ष महोदय और साथियो, मैं अपनी स्थिति से इतना दुःखी हो गया हूँ कि कुछ कहना नहीं चाहता। अपने को मैंने भाग्य के भरोसे छोड़ दिया है। एक समय था जब संसार का कोई भी घर, कोई भी व्यक्ति मुझसे अपरिचित नहीं था वसुधैव कुटुम्बकम् को मैंने चरितार्थ किया था। प्रकृति से मुझे कोई शिकायत नहीं, कृतघ्न केवल मनुष्य हो गया। आदिकाल से चले आ रहे रिश्ते को उसने एक झटके से ऐसे तोड़ दिया, जैसे बिना पेंशन पाने वाले अभिभावक से बुढ़ापे में लोग रिश्ता तोड़ लेते हैं। जिनका साथ मैंने छुट्टी के समय से दिया, जिनके दाँत निकलते मैंने देखे, वे ही बेशर्मी से आँखें फेर लेते हैं। जब मेरे अग्रज खाँसी करे की ऐसी दुर्गति है तो मैं किस खेत की मूली ठहरा! किन्तु बुद्धिमान शोक नहीं करते, ऐसा मैंने गीता में पढ़ा है, अतः बीतराग हो गया हूँ क्योंकि शोक अशांति का कारण है। मोह असत्य है तो लोगों की कृतघ्नता पर आक्रोश भी व्यर्थ है। यह दोहा आज मेरे लिए अर्थवान हो गया है कि—

अति परिचय ते होत है, अरुचि अनादर भाय।
मलयागिरि की भीलनी, चंदन देत जराय॥

मलेरिया मुखर्जी—सज्जनो, कुलीनतन्त्र का युग गया, इसका एक उदाहरण मैं

[illegible] हूँ। प्रजातंत्र की इस नयी आँधी में कुल से भी बड़े दो कुल नष्ट हो गए—एक मेरे बन्धु श्री हैजा नारायण सिंहजी का और दूसरा [illegible]मान्य श्री पंडित प्लेगदत्त पाण्डेय जी का। हमारे ये तीन कुल कीटाणु-राजवंश के इतिहास के सुनहले अध्याय रहे हैं। इनकी [illegible] और नरमेधों की गाथाएँ देश-देशान्तरों में गूँजती रहीं। ऐसे शक्तिशाली साम्राज्य, जो परस्पर सद्भाव रखते थे, एक दूसरे की राज्य-सीमाओं और प्रभुसत्ता का आदर करते थे अब इस धरा-धाम से उठ गये। जैसा सभी रियासतों के साथ हुआ, इनके भी [illegible] छिन गये। इनका अपराध क्या था, यह आज तक मेरी समझ में नहीं आया। ये कुलीन थे। महीनों का क्या कहना, वर्षों का भोजन ये एक दिन में कर लेते थे। लोगों ने इनका मूल्य नहीं समझा अन्यथा आज गला फाड़-फाड़ कर इन्हें 'परिवार-नियोजन, हम दो, हमारे दो' चिल्लाना नहीं पड़ता। ज्यादा उम्मीद तो इसी बात की थी कि सरकार को "अधिक अन्न उपजाओ" की तरह 'अधिक [illegible] जनो" का नारा अख्तियार करना पड़ता। हमारे यहाँ वैदिक युग का वह आशीर्वाद—"एक से इक्कीस हो"—पुनः फलित होता। आज हमारी स्थिति यह है कि हम भूखे पेट हैं, फिर भी चैन नहीं। सज्जनो, आपको एक बात बताऊँ! हमारे इन तीन कुलों में प्रथम दो अधिक उग्र वृत्ति के थे। ये शक्तिशाली तो थे पर बड़े क्रोधी भी थे। परिणाम वही हुआ, जो होना था। श्री हैजा नारायण सिंह जी के कुल के अन्त के बाद जो रही-सही खेती-वाड़ी थी, उसे देखने के लिए उनकी दूर की बहन का एक मध्यम वर्गीय लड़का आ गया है। दुःख है कि वह विधर्मी पश्चिमी प्रभाव में आकर ईसाई हो गया है और अपना सुन्दर नाम बिगाड़ कर 'ठाकुर डिसेन्ट्री सिंह' बताता है। फिर भी मैं खुश हूँ कि चलो, विशाल उजड़े राजमहल में कोई चिराग जलाने वाला तो मिला। पंडित प्लेग दत्त जी का बड़ा दुखद अंत हुआ। वे भरी जवानी में मरे और वह भी अविवाहित। रंगरेलियाँ तो उन्होंने बहुत की थीं कच्ची उम्र में ही, मगर वंश न चल सका, नष्ट हो गया इतना बड़ा कुल। कुछ लोगों से सुना है कि उनके रसोइया का एक लड़का, जो अपने को महाराज का पुत्र बताता है, कचहरी में उत्तराधिकार का दावा कर चुका है। उसका नाम श्री चेचक चौबे ने बताया कि फाइलेरिया पाण्डेय है। चौबे जी ने यह भी कहा है कि लड़का बड़ा होनहार दीखता है। सम्भव है, सयाना होने पर कुछ करे। मुझे मालूम है कि वह इस सभा में उपस्थित है। मैं उसे आशीर्वाद देता हूँ कि भगवान यमराज उसका मंगल करें।

चेचक चौबे—हे भगवान! यह मैं क्या देख रहा हूँ! मैं क्या हो गया! साम्राज्य न सही, राज्य तो था। जहाँ दूसरों का मुँह मैं काला करता था, वहाँ आज मेरा ही काला हो गया। माँ शीतला, क्या यही मेरी भक्ति

का फल मिलना था! कितने अपमान के घूँट मुझे पीने पड़े हैं! बन्धुओ, आप लोग अपने प्रिवी-पर्स के छिनने की बात कर रहे हैं, मगर मेरी हालत देखिए! आज तो मुझे ऐसे अनुबन्ध, ऐसे समझौते करने पड़े हैं जो मेरे पितरों को भी कलंकित करने वाले हैं। मैं आज राजहीन हो नहीं, एक बन्दी हूँ। सिर्फ एक हफ्ते तक किसी की बाँह पर बैठने का अधिकार मुझे मिला है। अपनी अक्षौहिनी-सन्ततियों से अलग मुझे निर्वासित जीवन दिया गया है। परिवार, कुल, सम्बन्धियों को मार कर यदि स्वर्ग का भी भोग हो, तो उससे मृत्यु अच्छी है।

सभापति मिस्टर कैंसर का संक्षिप्त भाषण

भारत के मेरे मित्रो, आप सबों के भाषणों को मैंने ध्यान से सुना है। आपने सम्बोधित करने और सभापतित्व करने के लिए मुझे आमन्त्रित किया, इसके लिए आपका आभारी हूँ। आपका इतिहास तो महिमामय रहा है, किन्तु आपके स्वर आज निराशा के हैं। इसका कारण यह है कि आपने केवल भावना से काम लिया, बुद्धि उपेक्षित हो गई। आपने इस अपेक्षाकृत बदले वातावरण के प्रति क्षोभ ही प्रकट किया, इस पर विजय प्राप्त करने की कोई कोशिश नहीं की। बुद्धि की सूक्ष्मता के लिए आपको मेरी ओर देखना होगा। आपके प्रयत्न भी सूक्ष्म होने चाहिए। यह रॉकेटों का युग है। मैं आपको निराश करने नहीं आया हूँ, प्रोत्साहित ही करने आया हूँ। अब आपकी शक्ति अणु-शक्ति की छिपी-ऊर्जा की तरह सूक्ष्म होनी चाहिए। मुझे देखें! मैं जिस व्यक्ति की मित्रता करता हूँ, उसे मेरी उपस्थिति का भान तक नहीं होता। वह हँसता-गाता अपने में मस्त रहता है, और एक दिन—एक दिन अणु का विस्फोट होता है। ज्वालामुखी भड़कती है और सब कुछ क्षण में राख हो जाता है। मैंने आपके सामने एक योजना रखी है—सी० एस० आई० पी० अर्थात् कन्सर स्प्रेडिंग इन्टरनेशनल प्रोग्राम। हमें धन की कमी नहीं, कार्यकर्त्ताओं की कमी है। आप इसके सदस्य हों और इससे न केवल अपनी खोयी हुई महिमा प्राप्त करें, वरन् अनन्त काल तक विश्वविजयी होने की बात सोचें। एक बार पुनः मैं आपका धन्यवाद करता हूँ।

हर आदमी बेईमानी की तलाश में है और हर आदमी चिल्लाता है—बड़ी बेईमानी है।

: हरिशंकर परसाई

स्वस्थ कैसे रहें ?

● प्रो० रमेश प्रसाद राय

राजनीति विज्ञान विभाग

कहावत पुरानी पड़ चुकी है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन-मस्तिष्क रहता है, परन्तु आज वैसे लोगों की कमी नहीं जिन्हें पुरानी कहावत भी याद दिलाने की आवश्यकता है। स्वास्थ्य को हल्के रुप में लेना कभी भारी पड़ सकता है, तो फिर हम सचेष्ट क्यों न रहें !

शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों के स्वाभाविक विकास का नाम स्वास्थ्य है । मानव जीवन के हर क्षेत्र में स्वास्थ्य प्रत्येक अवस्था में सफलता की कुंजी है । शरीर या मन से अस्वस्थ व्यक्ति परिवार, समाज और अन्ततः राष्ट्र के लिए घातक सिद्ध होता है, अतः प्रत्येक व्यक्ति को स्वास्थ्य के नियमों का अवश्य: पालन करना चहिए। सुन्दर स्वास्थ्य उपयुक्त भोजन, संयम (ब्रह्मचर्य) और नियमित व्यायाम पर निर्भर है।

उपयुक्त भोजन : हमारे जीवन के लिए भोजन बहुत आवश्यक है क्योंकि शरीर का अस्तित्व बहुत कुछ भोजन पर निर्भर है, किन्तु यदि भोजन आवश्यकता के अनुकूल नहीं हुआ तो वह अधिकतर रोगों का कारण हो जाता है। अतः यह विचारणीय है कि हम क्या खाएँ, परन्तु हमें सतत् याद रखना चाहिए कि :—

(i) जरूरत से ज्यादा न खायें ।
(ii) बिना भूख के न खायें ।
(iii) जिह्वा के वशीभूत होकर गलत और बेमेल चीजें न खायें ।
(iv) थके-माँदे एवं शोक-क्रोध की अवस्था में न खायें ।
(v) खूब चबा-चबाकर खायें ।
(vi) खाते समय जहाँ तक हो, पानी न पीयें या कम से कम पीयें ।
(vii) भोजन के एक घंटा बाद या एक घंटा पहले तक पानी अवश्य पीयें !

संयम (ब्रह्मचर्य) :

स्वास्थ्य के साथ संयम का इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि जब तक हम अपने आचरण और विचारों को शुद्ध और पवित्र न बना लें, तब तक पूर्ण स्वास्थ्य का पाना कठिन है । स्वस्थ रहने के अनेक उपायों में संयम सर्वोपरि है । जिन लोगों ने थोड़े समय

तक भी निष्ठापूर्वक संयम किया है, उन्हें इसका अनुभव होगा कि किस प्रकार उनका शरीर और मन शक्ति और सौन्दर्य का अनुगामी होता जाता है । संयम स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन की आधारशिला है। इसके बिना पुरुष का पुरुषत्व एवं स्त्री का स्त्रीत्व हीन हो जाता है और न बुद्धि-विलक्षणता ही रह जाती है।

संयम का अभाव ही अभिमान, क्रोध, भय और ईर्ष्या का कारण होता है। यदि हमारा मन हमारे वश में न रहे, तो हमारा मस्तिष्क जान-बूझकर या अनजाने में कोई दुष्कर्म कर सकता है। यदि हम चाहते हैं कि हमारा विवेक जाग्रत रहे, शरीर और मन स्वस्थ रहे, तो यह नितान्त आवश्यक है कि हम अपने सम्पूर्ण कार्य-कलापों पर संयम रखें; यथ —

(i) रात्रि में जल्दी सोकर सुबह में जल्दी उठ जाना और तत्क्षण नित्य क्रिया से निवृत्त हो जाना। इससे आप ताजगी और स्फूर्ति का अनुभव करेंगे।

(ii) प्रतिदिन सुबह-शाम शुद्ध चित्त से ईश्वर-प्रार्थना करना। इससे आप निर्मल और पवित्र रहेंगे।

(iii) भोजन हमेशा हल्का और सात्विक करना चाहिए। इससे मन और स्नायु में शान्ति रहेगी और इन्द्रियों में उत्तेजना पैदा नहीं होगी।

(iv) विचारों को पवित्र और निर्मल बनाये रखने के लिए उत्तमोत्तम साहित्य का अध्ययन करना चाहिए।

(v) उत्तेजित करने वाले नाटक, सिनेमा आदि से परहेज करना चाहिए।

(vi) हमेशा किसी न किसी अच्छे काम में लगे रहना चाहिए।

(vii) एकान्तवास को त्यागना चाहिए, यहाँ तक कि पति-पत्नी को भी सन्तानोत्पत्ति की इच्छा के सिवा एकान्तबास से बचना चाहिए।

(viii) नित्य प्रति योगासन और प्रातः व्यायाम करना चाहिए। इन सबों से मन संयमित रहेगा और तन स्वस्थ रहेगा।

व्यायाम :

जिस प्रकार स्वस्थ शरीर और सुन्दर मन के लिए सुभोजन और संयम की आवश्यकता है, उसी प्रकार शरीर के प्रत्येक अवयवों, धातुओं और तन्तुओं को सुदृढ़, सशक्त और स्वस्थ बनाये रखने के लिए नियमित रुप से व्यायाम करने की आवश्यकता है। वैसे, व्यायाम करने के अनेक ढंग हैं, जैसे—दण्ड-बैठक लगाना, कुश्ती लड़ना, मुगदर घुमाना, फुटबॉल-हॉकी आदि खेलना, घोड़े की सवारी करना, तैरना, दौड़ लगाना, योगासन करना आदि, किन्तु इन सबों में योगासन सर्वोत्तम व्यायाम है। योगासन के अभ्यास से फेफड़े में वायु-ग्रहण करने की शक्ति बढ़ती है और हृदय की माँसपेशियाँ सशक्त और सदृढ़ हो जाती हैं।

वृक्क और यांत्रिक पेशियों में तनाव पड़ने से उनमें रक्त-प्रवाह तेजी से होने लगता है, जिससे विकार घुलकर पेशाब तथा पाखाना द्वारा निकल जाता है। कब्ज से त्राण मिलता है तथा उसकी पेशियाँ सशक्त हो जाती हैं। पाचन क्रिया बढ़ जाती है। त्वचा का रोम-छिद्र खुल जाने से सारे शरीर का विकार पसीने द्वारा निकल जाता है। मस्तिष्क और स्नायु-संस्थान में रक्त का अधिक संचार होता है और उसमें ताजगी आ जाती है। काम करने की शक्ति बढ़ जाती है तथा शरीर सदा स्वस्थ बना रहता है।

निष्कर्षतः, उपर्युक्त बातों का यदि नियमित रुप से पालन हो तो दुर्बल और रुग्न व्यक्ति को भी नया जीवन मिल सकता है। बस, जरुरत इस बात की है कि हम तत्काल स्वास्थ्यरुपी घर को दुरुस्त करने में लग जायँ। कहा गया है—

पत्थर-सी हों मांसपेशियाँ,
लोहे से भुजदण्ड अभय,
नस-नस में हो लहर आग की
तभी जवानी पाती जय।

जब पेट खाली होता है तो जिस्म रुह बन जाता है और जब वह भरा होता है तो वह रुह जिस्म बन जाती है। : सादी

विज्ञान और विश्वशान्ति

● प्रो० रेखा कुमारी

भौतिकी विभाग

यह बात अवश्य है कि विज्ञान निर्माण भी करता है और विनाश भी, परन्तु इसका अच्छा या बुरा होना सदुपयोग या दुरुपयोग करनेवाली बुद्धि पर निभर है। उपयोगी ज्ञान का दुरुपयोग तो अवैज्ञानिकता ही है।

विज्ञान और वैज्ञानिक एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। कुछ लोग जन्म, कर्म एवं भाग्य से विलक्षण प्रतिभा तथा विशिष्ट व्यक्तित्व के धनी होते हैं। उनकी विशिष्टता तब और भी बढ़ जाती है, जब वे अपने दृढ़ निश्चय, कठोर परिश्रम, घोर आत्मविश्वास, साकारात्मक प्रयत्न, सरल एवं सौम्य आचरण, संयत कर्त्तव्यपरायणता और निरन्तर जागरुकता के बलबूते पर कुछ विशिष्ट बन जाते हैं। किसी भी वैज्ञानिक के जीवन की यही आधारशिला है, जिसके परिणामस्वरुप विज्ञान वरदान के रूप में मानवकल्याण कर रहा है। कहने की बात नहीं कि आज का युग विज्ञान और तकनीक का युग है। आविष्कार ही विज्ञान की जननी और रहस्य ही पिता है। वह जमाना लद गया, जब भूत या राक्षस का भय दिखाकर माँ अपने बच्चों को रात के अँधेरे में सुलाने की कोशिश करती थी। आज की माँ अपने बच्चों को परमाणु बम और न्यूट्रान बम गिरा दिये जाने का भय दिखाती है।

छः अगस्त, १९४५ का वह दिन—नीले आकाश में एकाएक सफेद बादल का घिर जाना और उसके बाद चींखती चिल्लाती जनता! कहीं न कहीं बच्चे के अचेतन मन में बम की विभीषिका बस जाती है। बच्चा सपने में 'माँ! माँ!! बचाओ! भागो!! बम!!!' बोलता हुआ आँखें खोलता है। यह आशंका हमारी भावी पीढ़ी की बुद्धि को कुंठित, उसे डरपोक और पंगु बना देगी। यह ऐतिहासिक भूल की पुनरावृत्ति की आशंका है। क्या ऊपर बैठी उन पुण्य आत्माओं को चैन मिलेगा जिन्होंने अपने खून का एक-एक कतरा मानव-कल्याण के हेतु बहाकर आविष्कारों का बाजार लगा दिया—जिन्होंने

को रात और दिन को दिन नहीं कहता।

यह बात अवश्य है कि आज अधिकांश देश एक से एक नये और खतरनाक हथियार बनाने में अपनी पूँजी का अधिक से अधिक उपयोग करने में लगे हैं। महान् दार्शनिक बर्ट्रेन्ड रसेल की कही बात है कि यह दुनिया सिगरेट जलाए बारूद के ढेर पर खड़ी है। न जाने, कब हवा के एक झोंके के साथ आग की एक चिनगारी सारे विश्व को खाक कर दे! लेकिन जिन्दगी को सुलभ और खूबसूरत बनाने में भी हमारा विज्ञान हमारी कितनी मदद कर रहा है! जिस तरह माँ के दूध का कोई ऋण नहीं चुका सकता, उसी तरह विज्ञान का ऋण कोई सौ बार जन्म लेने पर भी नहीं चुका सकता।

जहाँ न्यूटन के भौतिक विचार ने ऊर्जा (Energy) और पिण्ड (Mass) को अलग-अलग बताये थे, वहीं १९ वीं सदी के विश्व-प्रतिष्ठ वैज्ञानिक आइन्सटीन ने अपने प्रयोगों द्वारा $E=mc^2$ का सिद्धान्त दिया। उन्होंने कहा कि अगर पदार्थ के किसी एक कण को प्रकाश के वेग से गतिमान कराया जाय (जहाँ प्रकाश का वेग = १,८६,३१५ मील प्रति सेकेण्ड है), तो उसका पिण्ड अनन्त हो जाएगा, परिणामस्वरूप समय रुक जाएगा और दूरी शून्य हो जाएगी। इसी सिद्धान्त पर आधारित हिटलर की तानाशाही और उच्च भावना का नतीजा सर्वविदित है, और उससे भी ज्यादा हिरोशिमा और नागासाकी की दर्दनाक मौत से उनको गहरा सदमा लगा, यह उनके इस कथन से साफ-साफ पता चलता है :—

"We are mere tools in the hands of God, He makes us dance according to His tune".

वैज्ञानिक और विद्वान के उज्ज्वल हृदय को राजनैतिक दबाव में नहीं आना चाहिए। विश्व के सारे हथियार समुद्र में फेंक देने से ही क्या विश्वशांति की कल्पना की जा सकती है? नहीं। स्वार्थ में अन्धा मानव जब तक अपने विचार एवं संस्कार को नहीं बदलेगा, तब तक धरती माता के कलेजे को जलानेवाले राक्षसरुपी मानव मिलियन (१० लाख), बिलियन (१० खरब), ट्रिलियन (१ महाशंख) बार पैदा लेंगे।

शस्त्र बनाने में जो श्रम, तकनीक और पैसे लगाये जाते हैं, अगर वे एक देश द्वारा दूसरे देश की भलाई, उन्नति, आर्थिक विकास में लगाये जाएँ तो वह दिन दूर नहीं जब "सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः" की उक्ति सही हो जाएगी। जिस तरह धर्मशाला की छत के नीचे रहने वाली विभिन्न जातियाँ अलग-अलग संस्कार और परिवार की होती हुई भी एक दूसरे की शुभचिन्तक होती हैं,

उसी तरह ईश्वर की नीली छत के नीचे रहने वाले सभी लोगों की ऐसी ही मानसिकता होनी चाहिए। अपनों से वैर क्या? आखिर यह तन खाक में मिलेगा ही! सापेक्षवाद का सिद्धान्त देते हुए आइन्सटीन महोदय ने भी ईश्वर को निरपेक्ष सत्य माना है और उनके इस विचार का समर्थन महान दार्शनिक ब्रेडले ने भी किया है। विश्व के तमाम राजनीतिज्ञों एवं वैज्ञानिकों से प्रार्थना है कि विज्ञान का प्रयोग विध्वंशात्मक प्रवृत्तियों के लिए न करें, बल्कि बिज्ञान का ऐसे कार्यों में प्रयोग करें ताकि विश्व के तमाम मनुष्यों की भलाई हो सके, तभी विज्ञान द्वारा विश्वशान्ति हो सकती है।

बस, तीन

संकलनकर्त्ता : ● दिग्विजय सिंह 'राठौर', भण्डारपाल, भूगोल विभाग

तीन का सदा आदर करें —

माता	पिता	गुरु

तीन पर सदा दया करें —

बालक	भूखे	पागल

तीन से सदा मित्रता करें —

बल	विद्या	विवेक

तीन से सदा शत्रुता करें —

लोभ	क्रोध	भय

तीन को कभी न भूलें—

कर्ज	फर्ज	मर्ज

मोक्ष

● प्रो० हीरालाल शर्मा

दर्शनशास्त्र विभाग

मोक्ष ब्रह्म से साम्य प्राप्त करने की अवस्था है।

ज्ञान मुक्ति-मार्ग का श्रेष्ठ साधन है।

रामानुज : विशिष्ट द्वैतवादी रामानुज के अनुसार मोक्ष का अर्थ आत्मा का परमात्मा से तदाकार हो जाना नहीं है। उनके अनुसार मुक्त आत्मा ब्रह्म के सदृश हो जाती है और वह अपनी पृथकता छोड़कर ब्रह्म में लीन नहीं हो जाती है। रामानुज के अनुसार मोक्ष ब्रह्म से साम्य प्राप्त करने की अवस्था है। मुक्त आत्मा ईश्वर जैसी हो जाती है। वह सभी दोषों और अपूर्णताओं से मुक्त होकर ईश्वर से साक्षात्कार करती है। वह ईश्वर जैसा बनकर अनन्त चेतना तथा अनन्त आनन्द का भागी बनती है। रामानुज में भक्ति-भावना इतनी प्रबल है कि वह मुक्त आत्मा को ब्रह्म में विलीन नहीं मानते हैं। भक्त के लिए सबसे बड़ा आनन्द है ईश्वर की अनन्त महिमा का अनवरत ध्यान, जिसके लिये उसका अपना अस्तित्व आवश्यक है। रामानुज मानते हैं कि मोक्ष के लिए ईश्वर की कृपा अत्यावश्यक है। बिना ईश्वर की दया के मोक्ष असम्भव है।

स्वामी विवेकानन्द : स्वामी विवेकानन्द मानते हैं कि तत्व एक ही है और वह ब्रह्म है। यही ब्रह्म जब देश-काल-निमित्त (कारण) के आवरण में दिखाई पड़ता है तब उसे जगत कहते हैं। देश, काल और निमित्त कोई स्वतंत्र सत्ताएँ नहीं हैं, वे मन के परिवर्तन मात्र हैं। इनके माध्यम से ब्रह्म नाना रूपात्मक जगत में प्रकाशित हो रहा है। जिस प्रकार समुद्र तथा उसकी तरंगों में अभिन्न सम्बन्ध है, उसी प्रकार ब्रह्म और जगत में अभिन्न सम्बन्ध है। जिस प्रकार तरंगों को हम उसके नाम-रूप-भेद के कारण ही समुद्र से अलग समझते हैं, उसी प्रकार नाम-रूप-भेद के कारण ही ब्रह्म जगत रूप में भासित होता है। जीव जिस दिन इस भेद को समझ लेगा अर्थात् वह माया के पार चला जायेगा, यह देश, काल, निमित्त स्वयं अदृश्य हो जायेंगे और जीव मुक्ति-लाभ कर लेगा। प्रकृति ससीम है और आत्मा असीम है, अतः प्रकृति के ऊपर आत्मा की विजय सुनिश्चित है। आत्मा में निहित

अजेय शक्ति को विकसित कर हम प्रकृति पर आसानी से विजय प्राप्त कर सकते हैं। ऐसा करके ही हम मुक्ति पा सकते है। यही स्वामी-जी की दीक्षा है।

महात्मा गाँधी : गाँधीजी के धर्म की आधारशिला नैतिकता है। नैतिकता के विकास के लिए आध्यात्मिक चेतना आवश्यक है। गाँधीजी के अनुसार धर्म का उद्देश्य है सत्य या ईश्वर की प्राप्ति। सत्य या ईश्वर को प्राप्त करने के लिए मानव को अपनी तृष्णा, वेदना से ऊपर जाना होगा। ईश्वर को प्राप्त करने के लिए उसकी सृष्टि और उसके द्वारा मानव की सेवा आवश्यक है। यही सबसे बड़ी नैतिकता है। यदि मानव की सेवा करनी होगी तो ऐसी स्थिति में मनुष्य को अपने स्वार्थ, अपनी कामना को दूसरे के हित के लिए बलिदान करना होगा। गाँधी ने कहा है कि अन्ध-प्रेम नैतिक नहीं है। अज्ञानपूर्ण प्रेम सीमित होता है और स्वार्थपूर्ण होता है। ज्ञान उसकी सीमाओं को तोड़ सकता है। इसलिए नैतिकता और मोक्ष के लिए अन्तरात्मा की आवाज आवश्यक है। इस प्रकार गाँधीजी ज्ञान को मोक्ष-मार्ग का साधन मानते हैं।

हिंदिंग्लिश पढ़िए:—

V चार—V मर्श	विचार-विमर्श
मटK	मटके
चा B	चाबी
B काऊ	बिकाऊ
J बकतरा	जेबकतरा
उल्T-Cसी	उल्टी-सीधी
चोT	चोटी
V धाता	विधाता
U नान	यूनान
U रोप	यूरोप
O खली	ओखली
P ता G	पिताजी
क्रि K ट	किकेट
P टा E	पिटाई
C ला E	सिलाई

● शैल झा

द्वितीय वर्ष विज्ञान

स्थानीय भूगोल और भूगोल शिक्षण के उद्देश्य

● प्रो० शुभ कुमार साहु

भूगोल विभाग

पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों में एक है भूगोल, जो हमें देश-विदेश की सम्पूर्ण जानकारी देता है, लेकिन देश-विदेश की सम्पूर्ण जानकारी के पहले गृह प्रदेश की जानकारी मापदंड का काम करती है।

"भूगोल का प्रारम्भ उसी समय से हो जाता है, जब बालक अपने पालने तथा अपनी माँ की गोद में अन्तर समझने लगता है।"

"स्थानीय भूगोल अथवा गृह-प्रदेश का अध्ययन भूगोल की अति आवश्यक प्रारम्भिक आधार-शिला है। इसी स्थानीय भूगोल की कसौटी के आधार पर हम संसार के अन्य स्थानों का भूगोल समझ सकते हैं।"

वास्तव में संसार के भूगोल का अध्ययन करने के लिए स्थानीय भूगोल ही प्रवेश-द्वार है एवं इसका अध्ययन संसार की एकता को अधिक महत्व देता है। 'भूगोल - अध्ययन भी 'दान' की भाँति गृह-प्रदेश के अध्ययन से आरम्भ होता है और स्कूल की प्रारम्भिक कक्षाओं के अधिकतर कार्य स्थानीय भूगोल पर ही आधारित रहते हैं।

स्थानीय भूगोल से हमारा तात्पर्य किसी विशेष स्थान से या उसके पड़ोस में पायी जाने वाली ऐसी वस्तुओं के ज्ञान से है जिनके द्वारा हमें भौगोलिक वातावरण का बोध कराया जा सकता है, जिनके आधार पर हम भूगोल की बहुत-सी अन्य बातों को समझ सकते हैं। हमारा भौगोलिक वातावरण ही एक प्रकार से हमें स्थानीय भूगोल का अर्थ देता है। अपने पड़ोस के प्राकृतिक वातावरण का अध्ययन ही स्थानीय भूगोल का अध्ययन है। स्थानीय प्रदेश का अध्ययन वास्तव में वह व्यावहारिक साधन प्रदान करता है जिसकी सहायता से शेष संसार का अनुभव किया जा सकता है तथा उसे नापा जा सकता है। इस स्थानीय भूगोल के मापदण्ड द्वारा ही हम अन्य स्थानों की भौगोलिक परिस्थितियों की कल्पना कर सकते हैं। स्थानीय भूगोल ही विश्व-भूगोल का आरम्भ-स्थल है। स्थानीय वातावरण--घर, गाँव, पास-पड़ोस का समुचित भौगोलिक अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

"Any thing that is alive is far more interesting than any thing which is only pretending to be alive'

स्थानीय भूगोल के अध्ययन में हम महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक शिक्षा-सूत्रों का अनुसरण करते हैं। ज्ञात से अज्ञात की ओर, विशेष से सामान्य की ओर तथा सरल से जटिल की ओर अग्रसर होकर चालक के निरीक्षणात्मक अनुभव के आधार पर ही हम भूगोल का अध्ययन करते हैं। स्थानीय भूगोल अथवा गृह-प्रदेश का अध्ययन वह माप प्रदान करता है जिसके द्वारा संसार के आकार एवं इसकी लम्बाई-चौड़ाई को नापा और अनुभव किया जा सकता है।

"The local Geography is the threshold of world Geography and will help to emphasize the unity of the world."

भूगोल वास्तविकता का विषय है और स्थानीय भूगोल हमारी निरीक्षण-शक्ति को सबलता प्रदान करता है। स्थानीय भूगोल में हम अपने समीप के स्थानों की भूमि, उसकी बनावट, धरातल, बहाव, जलवायु, ताप, वर्षा, वायु, ऋतुएँ, प्राकृतिक वनस्पति, उपज, कृषि, खनिज, व्यवसाय, यातायात, व्यापार आदि का सम्यक् अध्ययन करते हैं। इस प्रकार गृह-प्रदेश के भूगोल का ज्ञान तथा अध्ययन शैक्षणिक, व्यावहारिक तथा स्थानीय रचना आदि की दृष्टियों से बड़ा महत्वपूर्ण है।

पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों की भाँति शिक्षा के उद्देश्य ही भूगोल-शिक्षण के उद्देश्य हैं। भूगोल-शिक्षण के मुख्य उद्देश्य ये हैं—

१. भूगोल शिक्षण द्वारा हमें देश-विदेश के निवासियों के प्रति सच्ची सहानुभूति उत्पन्न होती है। विश्व के विभिन्न भागों का वर्णन, वहाँ के निवासियों के रहन-सहन पर भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव जानकर हम उनके जीवन को भली-भाँति समझ सकते हैं तथा हमें यह भी ज्ञात होता है कि विश्व के भिन्न-भिन्न देश किस प्रकार कच्चा माल तथा बनी हुई वस्तुएँ भेजकर व्यापार द्वारा एक-दूसरे की सहायता करते हैं। आज के युग में कोई भी राष्ट्र अकेला कूप-मण्डूक होकर अपना काय नहीं चला सकता है। उसकी उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि वह मिल-जुलकर सहयोग से अपना कार्य करे। भूगोल के शिक्षक तथा विद्यार्थी 'सारे संसार को कुटुम्ब' समझते हैं। उनके हृदय में मानवता के प्रति प्रेम और सहानुभूति जाग्रत हो जाती है। वर्तमान युग में, जबकि भयंकर युद्धों से विश्व भयभीत हो गया है, इस प्रकार की 'विश्वबन्धुत्व की भावना' अत्यन्त आवश्यक है। विश्व में 'एकता की भावना' तथा 'मानवता के प्रति सहानुभूति' उत्पन्न करना भूगोल शिक्षण के महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं।

२. भूगोल सामाजिक विषय का एक अंग है। इसके ज्ञान के आधार पर हम ठीक प्रकार अपने सामाजिक वातावरण का अध्ययन कर सकते हैं। इंग्लैण्ड की स्पेन्स कमिटी की रिपोर्ट कहती है कि भूगोल संसार तथा उसमें प्राप्त विभिन्न वातावरण का ज्ञान कराता है

जिससे हमें सामाजिक तथा राजनीतिक प्रश्नों का यथार्थ ज्ञान होता है एवं अन्य देशों के निवासियों के विषय में सहानुभूतिपूर्ण जानकारी होती है।" इस विषय के अध्ययन द्वारा ही हम प्रकृत्ति तथा समाज दोनों में गहरा सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

३. भूगोल विश्वबन्धुत्व की भावना के साथ देश-प्रेम की भावना को भी प्रोत्साहित करता है। हम अपने देश के भूगोल का अध्ययन करते समय प्रकृति-प्रदत्त गगनचुम्बी विशाल पर्वत, वन, नदियाँ तथा खनिज पदार्थ आदि सुन्दर प्रकृति के बरदानों का अध्ययन करते हैं जिनके कारण हमारा देश उन्नति कर रहा है।

४. भूगोल शिक्षण से हमारी निरीक्षण-शक्ति, कल्पना-शक्ति, तर्क-शक्ति, निर्णय-शक्ति तथा स्मरण-शक्ति आदि मानासक शक्तियों का विकास होता है।

५. भूगोल शिक्षण से हमें जीविका कमाने तथा जीवन-यापन में सहायता मिलती है तथा इस शिक्षण के ज्ञान को दनिक जीवन में विद्योपार्जन काल में तथा उसके पश्चात भी प्रयोग में ला सकते हैं।

६. भूगोल प्रकृति-प्रेम उत्पन्न करता है। कौन ऐसा मनुष्य होगा, जिसका हृदय हिमालय की गगनचुम्बी, वर्फ से ढँकी हुई चोटियों को देखकर हर्षाह्लादित न होता होगा? सुन्दर हरे-भरे वन तथा उसमें बसने वाले पशु-पक्षी, झरनों का कल-कल नाद हमेशा से मनुष्यों में सौन्दर्य-भावना तथा कलात्मक भावना को जाग्रत करते आये हैं।

७. भूगोल अध्ययन से हम में यात्रा करने की रुचि, समाचार पत्रों को पढ़ने की इच्छा, मॉडल बनाने की प्रवृत्ति, स्टाम्प एवं चित्र एकत्र करने की इच्छा जागृत होती है।

८. भूगोल मस्तिष्क को विशाल तथा विस्तृत बनाता है, स्थानीय संकुचित क्षेत्र से ऊँचा उठाकर हमें विशाल विश्व-रंगमंच की कल्पना कराता है।

९. भूगोल शिक्षण आज के छात्रों को-जो कल के नागरिक हैं— प्राकृतिक साधनों-भूमि, वन, कोयला, पेट्रोलियम और अन्य बहुमूल्य खनिज पदार्थों का उचित तथा मितव्ययिता से उपयोग सिखाता है।

१०. भौगोलिक ज्ञान की सहायता से आज-कल के युग में प्रादेशिक आधार पर 'आर्थिक विकास की योजनाएँ' बनायी जा सकती हैं।

११. भूगोल शिक्षण का उद्देश्य मानव-जीवन पर पड़े भौगोलिक परिस्थितियों के प्रभाव को स्पष्ट करना भी है। मानव-जीवन पर प्रकृति नियंत्रण, मनुष्य का स्वयं को प्रकृति के अनुकूल बनाना, भिन्न-भिन्न भागों के निवासियों का जीवन, प्राकृतिक वातावरण के पारस्परिक सम्बन्धों को स्पष्ट करना तथा भौगोलिक तथ्यों, कारणों का निश्चय करना भूगोल शिक्षण के उद्देश्य हैं।

भूगोल शिक्षण के उद्देश्य

१—व्यावहारिक उद्देश्य

(i) भूगोल द्वारा स्थल सम्बन्धी ज्ञान ।

(ii) भौगोलिक ज्ञान द्वारा व्यवसाय, कृषि तथा उद्योग-धन्धों की उन्नति में सहायता ।

(iii) भूगोल के अध्ययन से जीवन-परिस्थितियों के भौगोलिक तथ्यों की सूझ ।

(iv) समाचार पत्रों और पुस्तकों में आने-जाने वाले भौगोलिक संदर्भों का स्पष्टीकरण ।

(v) पर्यटन की इच्छा की जागृति ।

२—सांस्कृतिक उद्देश्य

(i) भूगोल अध्ययन से स्वदेश-प्रेम की उत्पति

(ii) प्रकृति-सौन्दर्य का सच्चा आनन्द, प्राकृतिक दृश्यों, शक्तियों एवं जीवधारियों को समझने तथा सराहने में सहायता ।

(iii) 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का कल्याणकारी पाठ, मनुष्यों में सद्भावना, सहानुभूति तथा सहयोग की भावना जागृत होना ।

(iv) मानव और पृथ्वी सम्बन्धी दृष्टि से विश्व की वस्तुओं का मूल्यांकन ।

(v) भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार मानव-जीवन का अनुकूलन ।

"Geography is an Earthly subject, but a Heavenly Science."

जीवन की सबसे बड़ी कठिनाई यही है कि हम निरन्तर आसानी की ओर आकृष्ट होते हैं ।

: अज्ञेय

वह

● श्याम नारायण महासेठ

कार्यालय सहायक

वह ! कितना भोला-भाला ! कितना सीधा सादा ! कहीं कोई कृत्रिमता नहीं, कहीं कोई सजावट नहीं। नित्य ही एक-सा रहने-वाला वह ! मैंने उसे पाया—सदा एक-सा वस्त्र पहने। बहुत ही शान्त, स्थिर और गम्भीर। मैं उसकी ओर आकृष्ट होता चला गया। मैं लालायित रहने लगा उसके दर्शन के लिए। कितना महत्वपूर्ण है वह मेरे लिए, मैं कैसे आपको बताऊँ ! कितना प्यार करता हूँ उसे मैं, इसे व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। वह अपनी एक विशेष पहचान रखता है, एक विशिष्ट स्थान रखता है मानव-जीवन में !

उससे जो मेरी पहली मुलाकात हुई थी वह भी एक इत्तिफाक थी। मैं स्कूल का छात्र था और स्कूल में ही मेरी उससे मुलाकात हुई थी। उससे मिलने के बाद मेरे दिल की अजीब हालत थी। एक पल भी चैन नहीं मिलता। ईश्वर से प्रार्थना करता कि नित्य ही उसके दर्शन हों—उसे देखकर मैं अपनी आँखों की बेचैनी दूर कर लूँ। उसके आते ही निराश आँखों में आशा की किरणें खेल जातीं। वह जब भी आता, कुछ न कुछ नया सन्देश देकर जाता। कभी उसकी बातें बड़ी रोचक हुआ करतीं, तो कभी रहस्यात्मक। कभी उसके सन्देश को प्राप्त करते ह. प्रसन्नता की मन्दाकिनी बह उठती, तो कभी मुझे अपनी आँखों को आँसुओं के सैलाब में भी डुबो लेना पड़ता। धीरे धीरे उसके साथ मेरी आत्मीयता बढ़ती गई।

आज मैं महिला महाविद्यालय में कार्यरत हूँ। समय के लम्बे अन्तराल में भी उसके प्रति मेरी आत्मीयता में कोई अन्तर नहीं आ पाया है। आत्मीयता की भावना और सघन हो गई। कभी-कभी वह रिक्त हाथ भी आता। मैं विवश, निराश आँखों से देखता और मूक प्रश्न करता—'मेरे लिए आज कुछ नहीं लाये ?" मेरे प्रश्न का उसके पास उत्तर नहीं। वह चुप हो जाता।

सच बताऊँ—कई बार ऐसा भी होता है कि उसकी प्रतीक्षा करते-करते आँखें थक जातीं, पथरा जातीं और वह नहीं आता है। ऐसा लगता है कि कहीं कुछ खालीपन है, अधूरापन है। मन तब तक उचाट बना रहता है जब तक वह सामने न आ जाये। कभी वह सन्देशदाता बनकर आता, तो कभी अर्थदाता। अब तो अक्सर ही उससे मेरी

मुलाकात हो जाती है। उसका कोई निश्चित आधार नहीं। कभी यहाँ, तो कभी वहाँ।

हर किसी को उसका सहारा लेना पड़ता है। हर कोई उसकी उपासना करता है। अगर आप उसे एक दिन भी नहीं देखें, तो आपके हृदय की शान्ति खो जाएगी। हर जगह, हर क्षण, हर व्यक्ति उसके स्वागत में आँखें बिछाए खड़ा रहता। हर दरवाजा उसके स्वागत में खुला रहता है। हर उम्र के व्यक्ति उसे पसन्द करते हैं। वह, जिसे नारी भी प्यार करती है और पुरुष भी। उसे युवा वर्ग भी सम्मान देता है, तो वृद्ध व्यक्ति से भी उसे ममत्व मिलता है, दुआ मिलती है।

वह कोई साधारण-सा व्यक्ति नहीं है जो मुझ जैसे व्यक्ति पर केन्द्रित हो जाय और अपनी सारी ममता और करुणा बरसा दे मुझ पर। वह तो है भीड़ में रहने वाला, फिर भी रह जाता है भीड़ से असम्पृक्त, अनासक्त। किसी के प्रति उसकी आसक्ति नहीं। क्या आप जानना नहीं चाहेंगे कि वह कौन है जिसका स्वागत आबालवृद्ध किया करते हैं? अनोखे व्यक्तित्व का धनी वह व्यक्ति है डाकिया।

मूल की कृपा से ही शिखरों की शोभा है,
नींवों में दबी ईंट चमकती कलश पर है।
छोटों को हटा लो, फिर देखो, एक प्रश्नचिह्न
लगता कितना बड़ा, बड़े-बड़ों के सुयश पर है!

: किशोर

भूलें

● दीपक कुमार

प्रयोगशाला प्रभारी, मनोविज्ञान

प्राचीन काल से ही लोग तरह-तरह की भूलें करते आये हैं; जैसे—लिखने की भूलें बोलने की भूलें पहचानने की भूलें आदि। इन भूलों के प्रति लोग ध्यान दिये बिना अपने गतिशील जीवन में आगे की ओर बढ़ जाते हैं और यदि संयोगवश ध्यान दिया भी तो 'Sorry' कहकर चलते बनते हैं। ये भूलें अन्य वैज्ञानिकों की दृष्टि में भी बेतुकी हैं। इनका कोई अर्थ नहीं है, बल्कि ये असावधानी, थकान, संयोग आदि के कारण हो जाया करती हैं।

असामान्य मनोविज्ञान के जन्मदाता एवं मनोविश्लेषण के पिता फ्रायड ने बतलाया कि जिन भूलों को अन्य वैज्ञानिकों के अकारण बतलाया है, यही 'अकारण' शब्द उन भूलों के लिए बहुत बड़ा कारण बन जाता है, क्योंकि कोई भी घटना या भूल बेतुकी क्यों न हो, अकारण नहीं हो सकती। प्रत्येक भूल के पीछे चेतन अथवा अचेतन कारण अवश्य होता है। चूँकि ऐसी भूलें अनजाने में होती है, इसलिए फ्रायड ने इनके पीछे अचेतन प्रेरणाओं का हाथ बतलाया है।

Brown ने लिखने की भूलों के सुन्दर उदाहरण अपनी पुस्तक में दिये हैं। एक युवती को एक डॉक्टर से प्रेम था, किन्तु सामाजिक प्रतिबन्धनों के कारण प्रेम का प्रदर्शन वह स्पष्ट रूप से नहीं कर सकती थी। उस युवती ने एक दिन उस डॉक्टर को पत्र लिखा जिसमें 'डॉक्टर' की जगह 'Dear' लिख दिया। यह अनुचित था, फिर भी अचेतन रूप से प्यार करने की इच्छा के कारण युवती ने लिखने में ऐसी भूल की। इसी प्रकार एक शिक्षक ने एक मंच पर अपनी पत्नी को 'देवी' कहकर सम्बोधित किया। जब इसका मनोविश्लेषण किया गया तो पता चला कि अचेतन-तया शिक्षक अपनी पत्नी से नफरत करता था जिसकी अभिव्यक्ति पहचानने की भूल करके की। ठीक इसी प्रकार डॉ० स्टीकल ने एक उदाहरण दिया है कि एक समाचारपत्र में छपा था कि "हमने सदा स्वार्थभाव से जाति की सेवा की है", जबकि वह यह प्रकाशित करना चाहता था कि "हमने निःस्वार्थ भाव से जाति की सेवा की है।" इस प्रकार 'स्वार्थ' शब्द छापकर उसने अपने अन्दर छिपी बात को अचेतन रूप से स्पष्ट कर दिया।

इस तरह उपर्युक्त सारे उल्लेख एक स्वर से इस बात को स्वीकार करते हैं कि जीवन में होनेवाली ऐसी सभी भूलें अर्थहीन नहीं होती हैं, बल्कि इनका पूर्ण अर्थ एवं महत्व होता है। इन्हीं भूलों के माध्यम से व्यक्ति अपनी अचेतन इच्छाओं की तृप्ति करता है। इन्हें संयोग कह कर टाल देना बहुत बड़ी मनोवैज्ञानिक भूल है।

जैनेन्द्र के नाम मृणाल का पत्र

● अर्चना रानी

स्नातक कला (अन्तिम वर्ष)

मीरा की गीति, महादेवी की वेदना, पन्त की सुकुमारता, निराला की शक्ति, प्रसाद की नियति, गुप्त की उर्मिला; और कुल मिलाकर जैनेन्द्र की मृणाल—उनके 'त्यागपत्र' की नायिका, जो डॉ० नगेन्द्र के अनुसार लैम्प की प्रखर लौ है जिसमें प्रकाश के साथ धुआँ भी है। उसके जीवन का अन्त हृदय को हिला देनेवाली ट्रेजिडी है। काश, मृत्यु के पूर्व उसने अपने 'आका' को इस तरह का पत्र लिखा होता !

मेरे जनक,

आप मेरे स्रष्टा हैं, निर्माता हैं, इसलिए मेरे जनक हैं। मैं हूँ मृणाल—आपकी भाव-माओं के अनुसार ढली अबला ! आपने प्रमुख नायिका बनाकर भी क्या सही निर्णय किया है ? स्रष्टा तो वह होता है जिसकी सृष्ट सुन्दरतम होती है। वास्तविक जीवन की कटुताओं को वह दूर कर देता है। कला कलाकार की ही प्रतिकृति होती है। संसार में क्या दुख ही दुख है ? सुख भी तो है, पर दुनिया का सुख मिला कहाँ मुझे ! दुख झेलते-झेलते, थपेड़ों को खाते-खाते आपकी मृणाल तो पाषाणी बन गयी। बचपन में माँ बाप का साया उठा लिया आपने। भाई का स्नेह मिला, पर मावज मिली प्रताड़ना देने वाली। एकमात्र अपनत्व व ममत्व दिलाया था आपने मुझे भतीजे प्रमोद से। इस विषम परिस्थिति में शीला के भाई के प्रति मेरा आकर्षण आपने बढ़ाया और उसकी कठोर सजा दी आपने। प्रेम करना पाप नहीं है। वास्तव में प्यार एक त्याग है, पूजा है, भावना है। प्यार एक तड़प है, भावनाओं की आँधी; और शायद एक खूबसूरत और प्यारी-सी गलती भी, जिसे इंसान जाने-अनजाने कर बैठता है। इस प्रेम का रहस्योद्घाटन होता है परम्परित व रुढ़ि-मर्यादित परिवार में। ऐसी स्थिति में जो पुरस्कार मिलता है, वह मुझे भी दिलाया आपने। मेरी पढ़ाई छुड़ा दी, मैं मार खाती रही, परिणामतः मैं अपने-आप में विस्मृत-सी रहने लगी। मुझे मेरे प्रेम का पुरस्कार आपने दिया मेरी अनमेल शादी करवा कर। क्या ऐसा करना आपके लिए आवश्यक था ? यहीं से शुरु होती है मेरी जिंदगी की बेतरतीब कहानी। मेरे जीवन की किस्मत में कितनी पीड़ा की कल्पना आपकी की ! क्या यही है यथार्थ, जिस पर आपने गढ़ी अपनी मृणाल की प्रतिमा ?

विवाह के बाद भी मैंने पति की ओर समझौते का हाथ बढ़ाया, पर वहाँ भी मेरा स्वागत करवाया आपने उपेक्षा और प्रताड़ना से। अपने पति का विश्वास जीतने के लिए मैंने अपने पूर्व सम्बन्ध का रहस्योद्घाटन किया, लेकिन सत्य पाप बन गया। पति पापिष्ठा और दुराचारिणी समझने लगे। अगर प्रेम करना पाप है, सच बोलना पाप है, तो मेरे स्रष्टा, आप ही बताएँ कि पुण्य क्या है? आपने क्या नारी का यही रूप पसन्द किया था?

खैर, सभी की जिन्दगी एक-सी नहीं होती! किसकी क्या राह है, यही पहचान तो जिन्दगी की जान है। आपके स्नेह की छाया, आपकी प्रेरणा मुझे मिल जाती तो मेरी जिन्दगी बन जाती। क्या बेबशी है—होंठों पर आह नहीं, आँखों में आँसू नहीं! मैं परित्यक्ता बनी, कोयलावाले ने मेरी सहायता की। क्या समाज में मेरे लिए कोई अन्य स्थान आपको नहीं मिल सका कि भेज दिया कोयले वाले के पास? आखिर हूँ तो एक औरत! प्रेम तो किसी एक के साथ ही होता है, यह आपको याद नहीं रहा शायद। कोयलावाले ने भी एक दिन मुझे छोड़ दिया। उसकी अपनी बेबशी थी। परिस्थिति के झंझावातों में मेरा जीवन कहीं स्थिर नहीं रह पाया। मैंने नर्स की भूमिका अदा की, पर इसाई बनने के दबाव को नहीं सह पायी। शिक्षिका बनना चाहा, पर वहाँ भी आपने मेरा निर्वाह न होने दिया। सन्देहों के घेरे में घिरी, अपने पति से प्रताड़ित, पतिव्रता का जीवन बिताने की आकांक्षिणी आपकी मृणाल सड़कों पर भटकने लगी। उसे विशाल संसार अंधकारमय दीखने लगा। शाखाच्युत लता की तरह क्या मुझे बेसहारा बनाना आवश्यक था?

जीवन के अंतिम मोड़ पर मैं वहाँ पहुँची जहाँ से अकेली निकलना भी नहीं चाहती थी, क्योंकि मैं महसूस करती थी कि इस गर्हित समाज में छल असम्भव है परन्तु उच्च समाज का काम बिना छल के हो ही नहीं सकता। आपने ऐसा समाज भी तो खोजा होता जहाँ मुझ जैसी औरतों का गुजर होता, मेरे स्रष्टा! प्रमोद जैसा आत्मीय मुझे एक स्वस्थ-सुखद जीवन देने को बार-बार मेरे पास आया। मैं जानती हूँ, प्रमोद मेरा आत्मीय है, वह जज की कुर्सी पर आसीन समाज में प्रतिष्ठा का पात्र बना हुआ है। यदि प्रमोद के जीवन में आपकी मृणाल प्रवेश करती तो समाज का क्या बिगड़ जाता? उसकी प्रतिष्ठा पर आँच क्यों आती? आपने ऐसे समाज का निर्माण क्यों नहीं किया जहाँ दया, करुणा को देवगुण माना जाता और किसी लांछित ललना को सम्मान का पद दिया जा सकता? खैर, मैं तो केवल इतना ही जानती हूँ कि दुनिया में जब कोई एक बार बदनसीबी का द्वार खटखटा आता है, फिर उसका नसीब जागता ही नहीं। काश, मैं भी अपनी जिन्दगी का नक्शा कुछ और बदल पाती! वेदना की बोझिलता में

सिसकता जीवन किसे मिला ? मुझे ही तो ! फिर भी कोई उलाहना नहीं, कोई शिकवा नहीं ! अपनी ही किस्मत से फरियाद कैसी ? शिकायत करने से कमियाँ पूरी नहीं हो जातीं, रोने से मंजिल तय नहीं हो जाती। मैंने धरती पर स्वर्ग देखने की कल्पना की थी, इसलिए धरती भी मुझे भार समझने लगी। क्या सच-मुच जो बदनसीब होते हैं, वे जन्म के ही बदनसीब होते हैं ? उनके पास खुशियाँ आ ही नहीं सकतीं ? मेरी उमंगें सो गईं, मेरे अरमान मर चुके, इसलिए मुझे रंगीनियाँ फीकी लगने लगी हैं।

अपने जीवन-ग्रंथ के प्रथम परिच्छेद से अंतिम परिच्छेद तक के पृष्ठों को न जाने कितनी बार उलट-पुलट कर देखा। सोचा, न जाने, कहाँ भूल हो गयी ! संयम, संशय के बीच इतनी विवश, निरीह ... ... ! स्वप्न अधूरा रह जाता है, रह जाती है केवल स्मृति। जीवन के सुन्दरतम सपने, जिनकी पगध्वनियों को मैंने सुना था, की पगध्वनियाँ भी मौन हो गयीं। तुम्हारी सृष्टि होकर भी मैं कितनी निस्सहाय बन गयी ! शायद जीवन के क्षण अब भी शेष हैं। आपने बहुत सोच समझ कर मेरा नाम रखा था—मृणाल ! मृणाल कमलडंडी को कहते हैं। उसके एक किनारे कमल का फूल रहता है और दूसरा किनारा कीचड़ में धँसा रहता है। कीचड़ के सिवा, अर्थात् दुख के सिवा मुझे इस जिन्दगी में मिला क्या ? आपने मुझे ऐसी जिन्दगी दी, जिसे जीने की मेरी इच्छा नहीं—

मैं जिन्दगी को जी रही हूँ
मरण समझकर,
वस्त्र धारण कर रही हूँ
कफन समझकर !

मेरी जीवन-कथा के हाशिये पर मेरे ही विनाश की कहानी आपने कैसे लिख दी ? ऐसा लिखते समय क्या आपकी उंगलियों में पीड़ा नहीं हुई ? मेरे जीवन के अन्त का उत्सव तो आपने देखा ही है। मृत्यु जीवन का महापर्व है। उसे भी आपने उल्लास से मनाना सीखा है।

क्या मेरे सृजन में इतनी पीड़ा, इतना उत्पीड़न और इतनी करुणा का संगम करना आवश्यक था ? क्या मुझमें एक आदर्श नारी की कल्पना नहीं की जा सकती थी ? क्या नारी सिर्फ अबला ही होती है, उसमें सबला रूप का सृजन नहीं किया जा सकता ? मिथ्या रूढ़ियों को मिटाकर मुझे एक नयी राह पर नहीं चलाया जा सकता था ? क्या मेरे लिए इस विषमतासिक्त संसार से त्यागपत्र देना ही आवश्यक था ? क्या मुझे सेवासदन में प्रतिष्ठित नहीं किया जा सकता था ? मेरे स्रष्टा ! प्रेमाश्रम की कल्पना कर मेरे जीवन को आदर्श नहीं बनाया जा सकता था ? आप मूक क्यों हैं ? क्या मेरे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए आपके शब्दकोष के सारे शब्द शेष हो गए ? मैं शाश्वत पीड़ा ही लेकर तो जीती रही; और मेरे स्रष्टा, आप अपनी ऊँचाइयों की गरिमा

मूक बैठे! क्या छायावादी कवि प्रसाद की तरह नारी के श्रद्धा-रूप की कल्पना आप नहीं कर सकते थे ? क्या पतिता बना देना ही आपका उद्देश्य था ? अगर यही था, तो कोई बात नहीं। मैं आत्मपीड़न सहती रही, पीड़ा पीती रही, पीड़ा में ज्योति बन जलती रही— कटी पतंग की तरह मेरा निर्माण कर आप प्रसन्न तो अवश्य हो गए होंगे ! मेरे प्रश्नों का उत्तर मुझे मिलेगा न ? आप मूक क्यों हैं ? बोल क्यों नहीं रहे ? मेरे स्रष्टा, अगर इतनी ही नफरत थी, तो मेरी सृष्टि ही नहीं करते। अच्छा, मत बोलिए, पर इतना जान लीजिए कि अबला - जगत आपको कभी माफ नहीं करेगा..... कभी माफी नहीं देगा। बस !

आपकी अपनी ही—
मृणाल

जीवन हमारा

● सरिता — द्वितीय वर्ष कला

जीवन हमारा
एक गिलास है
जो कभी सुख,
कभी दुख के रस से भरा होता है।
जब यह गिलास
बना होता है सुख का जाम
तब हमारे बन्धु-मित्र भी इसमें
अपने जीवन का रंग मिलाते हैं;
और कहीं भरे हों इसमें
दुख के घूँट
तब मित्र तो क्या, अपने भी
बस, दूर से ही बुलाते हैं !

कल्पना और यथार्थ

● मनीषा

द्वितीय वर्ष कला

कल्पना के गहरे समुद्र में
लगाया था गोता मैंने—
दीख पड़े थे मोती
मृग-मरीचिका की तरह ।
मैं खुद में भटक गयी थी
रेत की तरह ।
जान पड़ती थी कल्पना
यथार्थ की तरह,
लेकिन क्या जानती थी मैं
कि हैं कल्पना और यथार्थ
दो किनारों की तरह !

ओवर एक्सपोज्ड

● शोभेन्दु सिंह

स्नातक (द्वितीय वर्ष) कला

एक कैमरे की भाँति
खड़ी रही मैं—
आगे से जो भी गुजरता गया,
मुझमें कैद होता गया ।
कल उनकी रीलें धोयीं—
सभी तसवीरें ठीक आयी थीं,
केवल एक,
जाने कैसे,
'ओवर एक्सपोज्ड' हो गयी थी !

शून्यात्मक बजट प्रणाली

● प्रो० सुरेन्द्र प्रसाद साहा वाणिज्य विभाग

आधुनिक विश्व में विभिन्न बजट प्रणालियाँ प्रचलित हैं । भारतीय अर्थव्यवस्था में परम्परागत व्यय आबंटन प्रणाली को स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरत बाद प्रथम चरण में ही समाहित कर लिया गया था। कालान्तर में, इस प्रणाली के स्थान पर निष्पादन बजट प्रणाली को कार्यान्वित करने का एक प्रयास 1968-69 में किया गया था । कुछ महत्त्वपूर्ण विभागों में इसे लागू भी किया गया था, परन्तु कई कारणों से फिर निष्पादन बजट प्रणाली को अपनाया नहीं जा सका। जिन विभागों में इसे कार्यान्वित किया गया था, उनके बजट "पूरक पत्रों" के रूप में संघीय बजट में शामिल कर लिए गये । संघीय बजट में शामिल कर लिए गये। संघीय तात्कालिक वित्त मंत्री ने 1985-86 के बजट के प्रस्तुतीकरण व्याख्यान में इंगित किया था कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की बजट प्रणाली में आमूल परिवर्तन किया जायेगा। परम्परागत बजट प्रणाली को शून्यात्मक बजट प्रणाली से प्रतिस्थापित किया जायेगा । हालाँकि इस प्रणाली का आंशिक उपयोग 1986-87 के बजट में भी किया जायेगा, परन्तु 1987-88 के बजट-प्रतिपादन का आधार Zero-base Budgeting ही होगी।

ZBB क्या है ?

शून्यात्मक बजट प्रणाली में परिव्ययों के आबटन की शैली हमारी परम्परागत व्यय-आबंटन प्रणाली से पूर्णतया भिन्न है। विकसित तथा विकासशील दोनों प्रकार के राष्ट्रों के सरकारी व्ययों में कई गुणा वृद्धि हुई है। सरकारी व्ययों को उत्पादक होना चाहिए तथा अनुत्पादक व्ययों में पर्याप्त कमी होनी चाहिए। इस दिशा में विश्व की अर्थव्यवस्थाओं में पूर्णतया परिवर्तन हुए हैं। परम्परागत बजट प्रणाली की जगह पर निष्पादन प्रणाली, नियोजन कार्यक्रमन प्रणाली तथा शून्यात्मक बजट प्रणाली को लागू किया गया है।

शून्यात्मक बजट प्रणाली के अभिप्राय को व्यक्त करते हुए भूतपूर्व अमेरिकन राष्ट्रपति श्री जिम्मी कार्टर ने कहा था —'शून्यात्मक बजट प्रणाली में बजट को इकाइयों में विभाजित कर दिया जाता है, जिसे निर्णय घटक कहते हैं । ये प्रत्येक स्तर के प्रबन्धकों द्वारा तैयार किये जाते हैं । ये 'निर्णय-घटक' प्रत्येक विभाग के वर्तमान एवं प्रस्तावित कार्यकलापों पर आधारित होते हैं। इनमें प्रत्येक कार्यकलाप के उद्देश्य, लागत, निष्पादन शैली, लाभ, वैकल्पिक कार्यव्यवस्था तथा परिणामों का

विशद विश्लेषण किया जाता है । फिर सभी 'घटकों' को वरीयता - क्रम दिया जाता है। तत्पश्चात् विभाग के प्रमुख तथा मुख्य निष्पादक के मध्य विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श होता है, जिसके फलस्वरूप 'घटकों' के वरीयता क्रम को अन्तिम रूप दिया जाता है तथा वित्तीय व्यवस्था के अनुसार 'घटकों' को अनुमोदन एवं वित्तीयण किया जाता है।

ZBB की प्रक्रिया के स्वरूप

शून्यात्मक बजट प्रणाली की प्रक्रिया की कई सीढ़ियाँ हैं । इसका कार्यान्वयन इन सीढ़ियों के निष्पादन के क्रम में होता है। ये सीढ़ियाँ इस प्रकार हैं :—

(१) विभागीय—इसमें इकाइयों को समाहित किया जाता है।

(२) फिर विभागीय उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को उद्घाटित किया जाता है।

(३) घटकों की संरचना तथा विकास सम्बन्धी निर्णय लिए जाते हैं।

(४) तत्पश्चात, वरीयता - क्रम का निर्धारण होता है।

(५ शीर्षस्थ-प्रबन्धन-स्तर पर विचार-विमर्श किया जाता है।

(६) अन्तिम वरीयता क्रम का निर्धारण होता है तथा इसकी स्वीकृति सम्बन्धित मंत्रालय से प्राप्त की जाती है।

(७) फिर वित्तीयन (Financialisation) किया जाता है।

विशिष्टताएँ

प्रथम, शून्यात्मक बजट प्रणाली की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं, जिनकी वजह से इसे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में प्रतिस्थापित किया जाता है। इस प्रणाली में बजट प्रक्रिया पूर्णतया वरीयता क्रम-विश्लेषण पर आधारित है। इसमें संगठन या राष्ट्र के उद्देश्यों तथा सामयिक आवश्यकताओं को पूर्ण महत्व प्रदान किया जाता है। हम स्पष्ट रूप में कह सकते हैं कि इस प्रणाली में राष्ट्रीय अभीष्ट लक्ष्यों का पूर्ण समावेश रहता है।

दूसरे, इस प्रणाली में नियोजन तथा बजट निष्पादन में कारणगत सम्बन्ध होता है । प्रस्तावित नियोजन का मूल्यांकन विश्लेषण तथा उपयोगिता ही बजट का स्वरूप निर्धारित करती है।

तीसरे, इस प्रणाली में निर्णय घटकों की संरचना तथा विकास लागत तथा लाभ के विश्लेषण के आधार पर किया जाता है । यदि कोई कार्यकलाप तथा संगठन के उद्देश्यों के अनुसार निश्चित लागत के लिए अपेक्षित लाभ नहीं प्रदान करता है तो उसे अनुत्पादक समझा जाता है । इस प्रकार यह प्रणाली वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है।

चौथे, इसकी निष्पादन-प्रक्रिया में सभी स्तर के अधिकारी सम्मिलित रहते हैं जिससे प्रत्येक स्तर पर कर्त्तव्यबोध का वातावरण बना रहता है निष्क्रिय साधन भी इस प्रणाली में सक्रियता प्राप्त कर लेते हैं।

पाँचवें, इस प्रणाली द्वारा बजट-निष्पादन में पर्याप्त समायोजनशीलता रहती है। यदि किसी कारणवश सगठन के आर्थिक ससाधनों में कमी के कारण वित्तीय व्यवस्था प्रतिकूल हो जाती है अथवा वित्त में सापेक्ष कमी आ जाती है तो क्रम वरीयताप्राप्त 'निर्णय घटकों' को बजट प्रक्रिया से पृथक कर दिया जाता है। इससे न तो संगठन के उद्देश्यों पर प्रभाव पड़ता है और न ही संगठन की कार्यक्षमता पर।

अवरोधक तत्व :

भारतीय परिवेश में शून्यात्मक बजट प्रणाली के निष्पादन में कुछ मूलभूत अवरोधक तत्वों का आभास महसूस होगा।

सर्वप्रथम कठिनाई भारतीय अर्थव्यवस्था में व्याप्त प्रशासन की निष्क्रियता ही परिलक्षित होगी। हमारे प्रशासक स्वयं कार्य करने में विश्वास कम करते हैं।

दूसरे, भारतीय अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन में कर्मचारी संघों तथा परम्परावादी राजनीतिज्ञों का अमूल्य सहयोग है। कर्मचारियों में काम न करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। आजकल संघ के नेताओं का परम उद्देश्य सगठन को अगतिशील बनाना है। भारतीय उद्योगों में कम्प्यूटर टेक्नोलोजी का विरोध जिस प्रकार नेताओं ने किया है, उससे इस प्रणाली की सफलता पर प्रश्नचिह्न लगता प्रतीत होता है।

तीसरे, इस प्रणाली में क्षमतावान, बुद्धिमान तथा अनुभवी एवं विशेषज्ञ अधिकारियों की ही आवश्यकता है। हमारे यहाँ इनकी कमी पायी जाती है। वित्त सम्बन्धी मामलों में गैर-वित्तीय भूमिका के अधिकारियों की नियुक्ति इसकी असफलता का स्पष्ट प्रमाण है।

चौथे, इस प्रणाली में प्रारम्भिक स्तर पर सम्प्रेषण, सूचनाओं तथा आँकड़ों से सम्बन्धित कार्य अधिक होते हैं। भारतीय परिवेश में निम्न सम्प्रेषण व्यवस्था—सूचनाओं के सकलन तथा आँकड़ों के तथ्यपरक विश्लेषण में व्याप्त अक्षमता इस प्रणाली की सफलता में मूलभूत रूप में बाधक सिद्ध होगी। यहाँ आँकड़ों का सकलन इस प्रकार किया जा सकता है कि वास्तविकता पर पर्दा पड़ जाय।

पाँचवें, भारतीय अर्थव्यवस्था में ग्रहण क्षमता की कमी है। किसी भी तकनीकी ज्ञान को सम्पूर्ण रूप से समाहित करना एक ही प्रयास में सभव नहीं है। प्राथमिक स्तर पर प्रखर विरोध होता है। वित्त मंत्रालय द्वारा घोषित आदेश के अनुसार इसका पूर्णरूपेण उपयोग 1987-88 के बजट में किया जायेगा, जबकि प्रत्येक स्तर पर नियुक्त दायित्वपूर्ण पदों के अधिकारियों को इसका समुचित ज्ञान भी नहीं है जिससे वे इस प्रणाली के कार्यान्वयन में स्वयं बाधक सिद्ध होंगे। चूँकि परम्परावादी प्रणाली में कम समय लगता है तथा स्वत: विश्लेषण तथा श्रमजन्य कार्य कम रहता है, इसलिए वर्तमान अधिकारी इस प्रणाली की निष्पादन-प्रक्रिया में पूर्णरूपेण उपयोगी नहीं

होंगे। यह भी सम्भव है कि वे अपना सहयोग भी न दें।

निष्कर्ष

शून्यात्मक प्रणाली की विशिष्टताओं के परिपेक्ष्य में निश्चित रूप से परम्परागत बजट प्रणाली में कमियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। इस प्रणाली का उपयोग अमेरिका में काफी लाभप्रद रहा है। इसका प्रमुख कारण अमेरिकी अर्थव्यवस्था के निजी क्षेत्र में उद्यमों का बाहुल्य है। यह एक निश्चित तथ्य है कि निजी क्षेत्र में कार्यक्षमता अधिक होती है, साथ ही प्रत्येक आवश्यक तकनीकी उपलब्धि के उपयोग में सुगमता रहती है। अक्षमतावान अधिकारियों का निजी क्षेत्र में कोई स्थान नहीं होता है। अतः यह प्रणाली अमेरिकी परिवेश में काफी सफल है। इसके विपरीत भारतीय अर्थव्यवस्था में राजकीय क्षेत्र (Public Sector) का वचस्व है, जो अक्षम प्रबन्धन तथा अव्यावसायिक दृष्टिकोण के लिए अत्यधिक ख्याति प्राप्त कर चुका है। स्पष्ट भाषा में हम कह सकते हैं कि यह प्रणाली पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के लिए अधिक उपयुक्त है। समाजवादी स्वरूप की अर्थव्यवस्था के लिए परम्परागत बजट प्रणाली की उपयोगिता अधिक महसूस की जाती है।

सफलता हेतु सुझाव :

यदि भारत सरकार वास्तव में परम्परागत प्रणाली का परित्याग करने के लिए तैयार है तो हमें अपनी अर्थव्यवस्था में अ मूल परिवतन करने होंगे अन्यथा इस उदघोषणा का वही परिणाम होगा जो 1968-69 में निष्पादन बजट प्रणाली की असफलता का हुआ था। इस दिशा में निम्नलिखित प्रयास करने होंगे—

(१) सर्वप्रथम, भारतीय नौकरशाही, लालफीताशाही, भाई-भतीजावाद, राजनीतिज्ञों तथा कर्मचारी सघों के नेताओं की मानसिकता को पूर्णतया परिवर्तित करना होगा। इस दिशा में सरकार को इस प्रणाली का प्रचार व प्रसार करना चाहिए।

(२) सरकार को चाहिए कि देश में ऐसे बजट विशेषज्ञों, वित्तीय विशेषज्ञों, अर्थशास्त्रियों, लेखा विशेषज्ञों का एक कैडर तैयार करे जो प्रत्येक स्तर पर नियुक्त अधिकारियों को अपने-अपने क्षेत्र से सम्बन्धित मामलों में प्रशिक्षित कर सके।

(३) सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों की शासन-व्यवस्था प्रशासकों की जगह विशेषज्ञों को सौंपी जानी चाहिए जिससे वे सरकार के उद्देश्यों परिपेक्ष्य के में उपक्रमों की व्यावसायिकता के आधार पर प्रबन्धन कर सकें।

(४) प्रत्येक इकाई स्तर पर बजट विशेषज्ञों प्रबंधकों, तकनीकी विशेषज्ञों की एक समिति का गठन किया जाय—इस समिति का स्वरूप इकाई के व्यवसाय पर निर्भर होना चाहिए।

(५) अधिक उपयुक्त तो यह होगा कि सरकार योजना आयोग की पद्धति पर "बजट आयोग" व 'मूल्य आयोग" की स्थापना करे जिसमें राष्ट्र के प्रतिष्ठित अथशास्त्रियों, प्रबन्धकों, वैज्ञानिकों को सम्बद्ध किया जाय।

(६) प्रणाली के निष्पादन की दिशा में आवश्यक वातावरण बनाया जाय। इसे कई अंशों में लागू किया जाय। प्रारम्भ में इसे कुछ सरकारी उपक्रमों में लागू किया जाय।

(७) प्रत्येक स्तर पर कम्प्यूटरों का समुचित प्रयोग किया जाय इससे आँकड़ों के विश्लेषण सूचनाओं के द्रुतगामी सापेषण में काफी सुविधा होगी। बजट प्रतिक्रिया में समय भी कम लगेगा।

इन सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होगा कि सरकार को अपनी अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में दृढ़ प्रतिज्ञ होना चाहिए कि वह किसी भी दबाव में इसका परित्याग नहीं करेगी। तभी शून्यात्मक बजट प्रणाली का समुचित लाभ हमारी व्यवस्था में परिलक्षित होगा।

●

जनता धरती पर बैठी है, नभ में मञ्च खड़ा है,
जो जितनी है दूर मही से, उतना वही बड़ा है!

: जानकी वल्लभ शास्त्री

अपनी बात

लेखनी

● प्रभा कुमारी

इन्टर कला

शायद मैं लेखनी के स्नेह से ही यहाँ तक पहुँच सकी हूँ। मैंने कुछ दिन पहले लेखनी को बहुत महत्त्व दिया था इसीलिए लेखनी भी मुझे महत्त्व देकर यहाँ तक ले आई।

बात उस समय की है जब मैं सप्तम वर्ग में पढ़ती थी। मैं जिस पाठशाला में पढ़ती थी उसके प्रधानाध्यापक श्री केदार सिंह की लिखावट बड़ी अच्छी होती थी। वे जहाँ भी लिखते थे, लगता था, छपाई के अक्षर हैं। मैंने भी संकल्प किया कि मैं लेखनी से प्रेम कर सुन्दर लिखावट लिखूँगी और मेरी ही तरह दूसरे लोग भी मेरी सुन्दर लिखावट को देखकर चकित हो जाएँगे। मैं प्रतिदिन बचे समय में लेखनी लेकर लिखने के लिए बैठ जाती। मेरी लिखावट धीरे-धीरे रास्ता बदलने लगी और आज मैं मोती के समान अक्षर पन्ने में सजा सकती हूँ।

पहले मैं पढ़ाई को भी कुछ महत्त्व नहीं देती थी, सिर्फ लाड़-प्यार में पागल रहती थी। मुझे पढ़ाई से एलर्जी थी। गार्जियन के डर से किताब तो सामने रखती थी, परन्तु उससे आन्तरिक कोई लगाव, कोई जिज्ञासा नहीं थी। पढ़ाई में कमजोर होने के कारण मैं प्रतिदिन गार्जियन से आशीर्वाद सुना करती थी। जितना ही वे डाँटते थे, मैं पढ़ाई से उतनी ही दूर जा रही थी। लेकिन, पता नहीं, लेखनी से दोस्ती होते ही मैं किस प्रकार पढ़ाई से भी जुड़ी! यह भी पता नहीं कि लेखनी की करामात से कहाँ तक चली जाऊँगी।

वास्तव में लेखनी के स्नेह ने ही मुझे नयी दिशा दी है।

●

नियति का लेख बँधा है। एक भी अक्षर उसका यहाँ से वहाँ न हो सकेगा।

: जैनेन्द्र

कथा

दर्द का रिश्ता

● अलका रानी

पुस्तकालय विभाग

सदर अस्पताल, राँची। वार्ड न० तेरह। डा० मल्होत्रा की राह देखते अस्पताल के असहाय रोगी। इन्तजार प्रातः के आठ बजे का। बस, दो-तीन मिनट और बाकी!

'हेलो बेबी! कैसी है अब तुम्हारी तबीयत?'—मधुरिम मुस्कान की छटा बिखेरते हुए डा० मल्होत्रा का स्वर गूँज उठा।

"अरे, चुप क्यों हो? क्या नाराज हो मुझसे?"—बड़े ही स्नेह से डाक्टर ने उसके सर पर हाथ फेरा। बेबी उर्फ पूजा ने करवट बदल ली, मुँह फेर लिया।

"अच्छी बेबी, कहीं इतनी भी नाराजगी! बस, आज भर माफ कर दो।"—एक विषाद का आवरण चढ़ता चला गया डाक्टर के चेहरे पर

'आप ·····!'—हिचकियाँ उठ गईं।

"अरे, रो रही है, पगली! बोल न, क्या दुःख है?"

"कल क्यों नहीं आये थे?"—रुआँसी-सी हो गई थी वह।

"कल तो मैं आया था। हाँ, तुम सो गई थी। फिर कहाँ रही मेरी गलती?"

"सच कह रहे हैं? आप आये थे?"—प्रश्न किया आँखों ने।

"और नहीं तो क्या!"—डाक्टर ने शान्त स्वर में उत्तर दिया।

'दवा खा ली?"—डाक्टर ने पूछा।

छोटा सा उत्तर दिया—"नहीं।"

"क्यों?"

"यूँही। इच्छा नहीं थी।"

"चलो, जल्दी से दवा खा लो"—डाक्टर ने दवा पिला दी और बढ़ गये दूसरे रोगी की ओर।

"बाबा, कैसा है तुम्हारा दर्द?"

"पहले से कुछ ठीक है, पर कोई विशेष फायदा नहीं है।"

"धीरे-धीरे सब ठीक हो जायेगा। चिन्ता की बात नहीं।" सिरिंज में दवा भर कर सहायक डाक्टर ने सूई लगा दी। वे मुड़ गये भोले-भाले मासूम-से बालक रोहित की ओर। रोहित देख रहा था उन्हें, चुपचाप।

"बुखार तो कुछ कम है"—उसके चार्ट को देखते हुए डा० मल्होत्रा ने कहा।

'हाँ, सर!"—नर्स का उत्तर था।

★ ★ ★

इमरजेन्सी कक्ष में अचानक फोन की घण्टी टनटना उठी। सहायक चिकित्सक ने फोन उठाया—"हैलो!'

"डा० मल्होत्रा ड्यूटी पर हैं ?"—एक आवाज आई।

"हाँ, हैं—वार्ड में"—लाइन कट गई।

चिकित्सक ने डाक्टर मल्होत्रा को सूचना दी।

वार्ड से छुट्टी पाकर जैसे ही चिकित्सक-कक्ष में डाक्टर पहुँचे, तो पूछा—"क्या केस है, डा० चन्द्रा ? किसका फोन था ?"

चन्द्रा ने बताया—"सर, एक लेडी है। माथे पर पट्टी बँधी है, शरीर पीला पड़ गया है, आँखें बन्द हैं। लगता है, सदमा का केस है। हालत नाजुक है।"

नर्स ने कहा—"सर, सड़क के किनारे यह बेहोश पड़ी थी। कुछ लोगों ने इसे यहाँ पहुँचा दिया है। बेहोश है।"

डा० चन्द्रा ने सिरिंज में दवा भरते हुए कहा—"सर, लगता है, पानी चढ़ाना पड़ेगा।"

सूई पड़ी, पानी चढ़ाया गया। कुछ पल बाद बीमार ने आँखें खोल दीं। आँखें निस्तेज-सी, संज्ञाशून्य-सी। कमजोरी काफी थी। बोझिल पलकें फिर बन्द हो गईं। कुछ दवा बगैरह लिखकर वार्ड में भरती करने का आदेश दे डा० चले गये।

★ ★ ★

वार्ड में नर्स जूही ने उसे दवा खाने को दी।

बीमार चीख उठी—"दवा··· दवा···· दवा ! क्यों ? मुझे क्या हुआ जो मैं दवा खाऊँ, नर्स ?"

"लीजिए, दवा खा लीजिए। डा० मल्होत्रा अभी आने ही वाले हैं। जो कहना हो उनसे कहिएगा।"

नर्स दवा देकर आगे बढ़ गई। बीमार महिला स्वयं बोलती रही—"इन अस्पतालों में जीने को दवा दी जाती है। दुःख, दर्द, संघर्ष से परिपूर्ण जीवन जीने को !"

नर्स ने डाक्टर को सूचित किया—"सर, बीमार युवती, जो कल आई थी, कुछ एबनॉर्मल लगती है।"

डाक्टर मल्होत्रा ने उसे देखा।

युवती बोल उठी—"डाक्टर साहब, आपकी कृपा के लिए मैं आपको धन्यवाद नहीं दे सकती, कारण, आपने एक अपराध ही किया है मुझे बचाकर। मैं मरना चाहती हूँ, डाक्टर !"

"अरे, यह आप क्या कह रही हैं ! डाक्टर का काम है जीवन देना। आप चिन्ता न करें। नर्स, सोने की दवा दो !"

"नहीं डाक्टर, नहीं ! मुझे मौत चाहिए, मौत !"

"चुप क्यों हैं आप ?"—उत्तेजित हो उठी थी वह।

"यह बाद में बताऊँगा। पहले यह दवा तो पी लो।"

"दवा··· दवा··· दवा··· ! नहीं, इतनी कड़ुवी दवा पीकर फिर क्या इसी कड़ुवाहट भरी जिन्दगी को जीऊँ !"—कहते कहते बेहोश हो गई वह।

उस रात डाक्टर को नींद नहीं आई। जीवन में यह पहला अवसर था जब वह मौन रह गये थे। न जाने, कितने दिलों की दुआ का कवच घेरे था उन्हें अपने चारों ओर, पर आज की यह घटना ! जीवन देने वाले को ही अभिशाप ! कब उनकी पलकें बन्द हो गईं, उन्हें नहीं मालूम ।

सूर्य की सुनहली किरणें बिखरी पड़ी थीं चिड़ियों की चहचह की ध्वनि से वातावरण मुखरित हो रहा था। डा० मल्होत्रा की आँखें खुल पड़ीं। प्रतिदिन की तरह कोई उमंग नहीं, कोई उल्लास नहीं, केवल ड्यूटी का ख्याल। घड़ी ने आठ बजा दिये। डा० मल्होत्रा पहुँच गये उन्हीं चिर-परिचित रोगियों के बीच। आज बीमार महिला शान्त थी।

"कैसी तबीयत है तुम्हारी ?"

"ठीक हूँ।"

डाक्टर आगे बढ़ गये। नर्स जूही ने बताया—'सर, बीमार ने दवा स्वयं ले ली थी। आपका परिचय पूछ रही थी। लगता है, अब नॉर्मल है।"

डाक्टर ने कोई उत्तर नहीं दिया।

वह धीरे-धीरे सामान्य होती गई। उसके स्वास्थ्य में सुधार होता चला गया। डा० मल्होत्रा के आते ही वह प्रसन्न हो जाती, जैसे जीवन के नये आयाम मिल गये हों उसे। समय बीतता गया। डाक्टर के साथ उसकी आत्मीयता बढ़ती गई और एक दिन जब वह पूर्ण स्वस्थ हो गई, तो उसे अस्पताल छोड़ना पड़ा। उसके जाने के बाद डाक्टर भी कुछ उदास-से रहने लगे थे। न जाने, क्यों, वह उसकी ओर खिंचते चले गये थे। अचानक एक दिन अस्पताल में उसे पुनः देखकर डाक्टर घबरा गये।

पूछा—'क्या कोई विशेष बात है, विभु ? कैसे आ गई ?"

"यूँही, सर ! मन नहीं लगा, चल आई। सोचा—— ....."—तभी नर्स प्रभा ने आकर कहा—"डाक्टर साहब ऑपरेशन का सामान तैयार है।"

"विभु, बैठो। मैं आया"—कह कर डाक्टर ऑपरेशन थिएटर की ओर बढ़ गये।

दूसरे दिन जैसे ही डाक्टर अस्पताल पहुँचे, देखा, फिर विभु खड़ी है उनकी प्रतीक्षा में।

"कहो, कैसे आई ?"

"सर, आप हर्ट-स्पेशलिस्ट, हृदयरोग विशेषज्ञ हैं और पूछते हैं कैसे आई, क्यों आई ?"

"देखो विभु, मैं एक डाक्टर हूँ। बीमार पहचानता हूँ। सिर्फ रोगी, अच्छे लोग ही मेरे पास नहीं आते। तुम अब बीमार नहीं हो, समझी ! व्यर्थ बीमार मत बनो।"

विभु चली गई—चुपचाप, निर्विकार निस्पन्द—डाक्टर को एक अभाव देकर।

समय के साथ डाक्टर भूल गये इस घटना को। समय जहाँ काटने दौड़ता है, वहीं वह मरहम का भी काम करता है। एक दिन

अपनी डाक देखते समय उन्हें मिला था—एक सुन्दर कलात्मक लिखावट वाला लिफाफा। वहाँ कुछ नहीं था, सिर्फ एक ऐसे सूखे उजड़े वृक्ष का रेखा-चित्र, जो मरुस्थल में खड़ा था। मल्होत्रा ने लिफाफा को गौर से देखा। भेजने-वाले ने अपने को अनाम, अपरिचित बना रखा था। डाक्टर ने उसे रख दिया। फिर काम में लग गये। इधर डाक्टर एक अजीब अभाव के शिकार हो गये। वह कुछ दिनों के लिए कश्मीर चले गये मन बहलाने, पर समय काटे कटता तो कोई बात होती! वह वापस आ गये अपने कर्मक्षेत्र में।

पुनः वह अस्पताल पहुँचे। रोगियों के चेहरे चमक उठे, जैसे जीवनदाता आ गये हों। डा० मल्होत्रा भी मुस्कुराते हुए आगे बढ़ते जा रहे थे, सबसे कुशल-क्षेम पूछते। सहसा उनकी दृष्टि पड़ गई विभु पर।

'विभु, तुम! यहाँ! क्या फिर दिल की बीमारी का शिकार बन गई?'—एक साथ और कई प्रश्न कर डाले डाक्टर मल्होत्रा ने।

"फिर आ गई हूँ, सर! डाक्टर जीवन-दाता होते हैं न! तुमसे जीवन पाने आ गयी हूँ। मरुभूमि की सूखी लता निष्प्राण है। उसे जीवनदान चाहिए, डाक्टर।" विभु मुस्कुरा पड़ी।

"यह क्या हालत बना रखी है तुमने? कैसा सुन्दर स्वास्थ्य हो गया था तुम्हारा! नर्स, चार्ट देखूँ।"

विभु ने कहा—"सर, बीमार सामने है। चार्ट में क्या है? आप डाक्टर हैं। मेरी बीमारी चार्ट से समझेंगे?" विभु ने करवट बदल ली। बुदबुदायी—'जीवनदाता डाक्टर!'

वह फिर बोली—"सर आपने कहा था न कि मेरा जीवन रोगियों को ही समर्पित है। मैं रोगी ही तो हूँ!"—आगे वह नहीं बोल सकी। आँखें बन्द हो गईं। बिखरे बाल, सूखे अधर.....।

अब तक डाक्टर सब कुछ समझ चुके थे। जो बातें उन्होंने सहज भाव से कही थीं, उनका इतना गहरा असर होगा, अब उन्होंने समझा। उन्हें याद आ गया वह बेनामी लिफाफा।

डाक्टर चले गये अपने निवास पर। वह फिर उलझ गये। दृष्टि पड़ गई उसी सूखे पेड़ के रेखा-चित्र पर। वह समझ नहीं पा रहे थे कि क्या करूँ? कैसे समझाऊँ 'उसे' कि उसे भी 'उसका' अभाव खलता रहा। नहीं। वह अब नहीं छुपाएगा। सब कुछ कह देगा—स्पष्ट। कर्त्तव्य पर भावना की विजय हुई। एक सन्तोष की रेखा खेल गई उनके अधरों पर। सहसा घण्टी टनटना उठी।

'हैलो'—डाक्टर ने रिसीवर उठाया।

'डाक्टर, विभु को अभी-अभी दिल का दौरा पड़ा है।"—आगे डाक्टर सुन भी नहीं सके थे। बदहवास-से वह पहुँचे वहाँ, जहाँ छोड़ आये थे विभु को। डा०, नर्स सभी चुपचाप

खड़े थे। डाक्टर मल्होत्रा भागते चले आये थे। तभी नर्स ने आकर सूचना दी—'सर!'—और माथा झुका लिया था उसने।

'क्या?"—बम की तरह फट पड़े थे डाक्टर मल्होत्रा।

नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। वे तेजी से आगे बढ़े। विभु के शरीर पर जो सफेद चादर डाल दी गई थी, उसे देख डा० मल्होत्रा एक क्षण के लिए मौन रह गये। उन्हें लगा, जैसे उनके भीतर बिजली कौंध गई। उन्होंने चादर उठाकर बीमार के चेहरे को देखा। अभी शरीर पूरा ठण्ढा नहीं हो पाया था। उन्होंने पूरे आत्मविश्वास के साथ हृदय-गति संचालन का प्रयास किया और एक चमत्कार हो गया। पराजित डाक्टर के चेहरे पर मुस्कुराहट आ गई। सहायक डाक्टर और नर्स परिचर्या में जुट गये। विभु की पलकें खुलें, इससे पहले ही डाक्टर कुछ आवश्यक हिदायत देकर एक दूसरे बीमार के पास पहुँच गये, जो कुछ ऐसी ही स्थिति में था। वहीं डाक्टर को सम्वाद मिला कि विभु में नव जीवन का सचार हुआ है। लोगों ने आश्चर्य से देखा—इतने गम्भीर, साथ ही हँसमुख डाक्टर की आँखों से दो बूँदें टपक पड़ी थीं। पता नहीं, यह विभु की वापसी की खुशी का चिह्न था या उनके कौशल का!

●

प्रेम में स्मृति का ही सुख है। एक टीस उठती है, वही तो प्रेम का प्राण है।

: जय शंकर प्रसाद

शिक्षा में भ्रष्टाचार

● पुष्पा शर्मा
स्नातक कला

यह सही है कि शिक्षा मानव को पूर्णता प्रदान करती है, परन्तु यह भी सही है कि शिक्षालयों और विश्वविद्यालयों में आज ज्ञान और क्रिया का मेल कम, राजनीति का खेल अधिक हो रहा है। और हमारी नयी शिक्षानीति ... दरअसल, यह स्टंट ही है—राजनीतिक स्टंट।

शिक्षा मानव को पूर्णता प्रदान करती है। हमारे देश में पहले शिक्षा का आधार गुरुकुल-परम्परा थी, जिसे मानव आज आवश्यकता के अनुरूप शिक्षण संस्थाओं आदि के रूप में बनाता जा रहा है, किन्तु भ्रष्ट राजनीति और स्वार्थ-लोलुपता ने इन संस्थाओं के वातावरण को विषाक्त कर रखा है। यह आज के युवाओं तथा देश के लिए घातक होता नजर आ रहा है। इसके शुद्धिकरण के लिए नयी शिक्षानीति को एक नये राजनीतिक स्टंट द्वारा दबाने का प्रयास हमारे युवा प्रधानमन्त्री श्री राजीव गाँधी ने किया।

अब सवाल यह उठता है कि क्या नयी शिक्षानीति हमें सही मार्ग पर ला सकती है, या नये लेबुल के साथ पुरानी बोतल वाली कहावत को चरितार्थ करती है? इसके जबाब के लिए हमें इस बात पर ध्यान केन्द्रित करना होगा कि नयी शिक्षानीति का प्रयोजन क्यों महसूस किया गया। तो, इसका कारण यह हो सकता है कि भ्रष्टाचार का साम्राज्य सभी शिक्षण संस्थाओं और शिक्षण व्यवस्थाओं में है, जो देश में करोड़ों बेरोजगार पैदा कर रही हैं। इस नयी शिक्षानीति के कारण युवाओं में असन्तोष बढ़ता जा रहा है जो कभी कहर बनकर बरस सकता है।

शिक्षा और भ्रष्टाचार का दूर का नाता नहीं है, किन्तु राजनीति और भ्रष्टाचार का एक दूसरे से सगा सम्बन्ध जान पड़ता है। इस देश में जहाँ शिक्षा द्वारा मानव-मानवता की ऊँचाइयों को छुआ जा सकता है, वहीं भ्रष्टाचार को मानव की मानसिक बिकृति का परिचायक कहा जा सकता है। लोभ मानवी प्रवृत्ति है जो उचित शिक्षा द्वारा ही पकड़ में रह सकती है। यह लोभ शिक्षा-जगत को दूषित कर रहा है।

आज शिक्षा-जगत में एक भी पत्ता राजनीतिज्ञों की इजाजत के बगैर नहीं हिल सकता है। कुलपति से लेकर एक शिक्षक की नियुक्ति या पदस्थापन—सभी कुछ राजनीतिज्ञों के इशारे पर चलता है। तो, कुलपति विश्व-

विद्यालय का काम देखें या अपनी कुर्सी बचाने हेतु उन पदस्थापित करनेवाले राजनीतिक आकाओं की आवभगत में रहे ! तो साहब, विश्वविद्यालय का काम कैसे हो, यह सोचने की उन्हें फुरसत कहाँ ? इसलिए उस विश्वविद्यालय का कार्य प्रायः ठप ही रहता है, जो शिक्षा की रीढ़ है ।

एक तो आवश्यकता के अनुरुप बिद्यालय नहीं हैं । जो हैं भी, तो उनके पास भवन नहीं हैं । भवन-निर्माण हेतु पैसे मिलते हैं तो ऊपर से नीचे तक के अधिकारी अपनी जेबों की ओभा बढ़ाते हैं । लोग चाहे चिल्लाते क्यों न रह जायँ, उनके कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती ! आये दिन जो घटनाएँ शिक्षा के क्षेत्र में घट रही हैं, उनसे पता चलता है कि कुल-पति से लेकर चपरासी तक और प्राइमरी स्कूल के प्रधान से लेकर सहायक शिक्षक तक—सभी नहीं, तो अधिकांश स्वार्थ के अनुरुप कार्य में व्यस्त रहते हैं । अपने पद का दुरुपयोग कर अपने रिश्तेदारों को परीक्षाओं में प्रथम स्थान दिलाना, अच्छी कुर्सी, अर्थात् जहाँ जेब गरम हो पर उन्हें पदस्थापित करना आदि कार्य अधिकारियों के बायें हाथ की करामात होती है, फिर चपरासी भी इस काम में क्यों पीछे रहें । और नहीं, तो वह आपको अधिकारी से मिलवाने के लिए पहले अपने हाथ गरम करेगा, फिर भीतर जाने पर साहब की जेब अलग से गरम करनी पड़ेगी, नहीं तो आपके घर में टूटे जूते-चप्पलों का अम्बार नजर आवेगा । शिक्षक बेचारे क्या करें, उन्हें भी यह झमेला झेलना ही पड़ता है ! तो वे भी इस तिकड़म में फँसकर यदि वग में ठीक से न जायँ, तो इसमें उनका दाष कहाँ रह जाता है ! कुछ समय मिला, तो ट्यूशन एवम् हड़ताल ही उसकी पूर्ति कर देती है । लगे हाथ पुस्तक छपाने वाले भी गेस पेपर और पासपोट छपाकर अपने कल्याण के साथ छात्रों का भी कल्याण कर देते हैं । इसमें उनका दोष कहाँ है जो आप बेकार उन पर शोर मचाते हैं !

हमारे युवा प्रधान मन्त्री को चाहिए कि वे राजनीतिक भ्रष्टाचारों को सबसे पहले समाप्त करें । शिक्षा-क्षेत्र से भ्रष्टाचार को उखाड़ फेंकना होगा, नहीं तो यह नयी शिक्षा-नीति 'पुरानो बोतल में नयी शराब' बनकर ही रह जायगी, जिसका स्वाद विकृत मस्तिष्क वाले भी चख पायेंगे, कोई शिक्षित विद्वान ही नहीं । नई शराब पीकर ये विकृत मस्तिष्क वाले और मदमस्त होकर शिक्षा को अपवित्र करेंगे, जिससे हमारा भारत राम कृष्ण, बुद्ध, गहाबीर का देश न रहकर कहीं रावण, कस का देश न बन जाय ! हमें इसी बात का डर है ।

यह है मेरा भारत देश

● साधना कुमारी झा प्रथम वर्ष कला

यह है मेरा भारत देश।
जहाँ हुई बेटी सीता,
पढ़े लोग बाइबल, गीता,
जहाँ मोहम्मद के उपदेश—
यह है मेरा भारत देश।

जहाँ बहें पावन नदियाँ,
जिनको बीत गयीं सदियाँ,
जहाँ कहीं है नहीं कलेश—
यह है मेरा भारत देश।

जहाँ सभी धर्मों के लोग,
मीठी भाषाओं का योग,
सबके रंग-विरंगे वेश—
यह हैं मेरा भारत देश।

जहाँ लोग ना अभिमानी,
कोयल सी जिनकी वाणी,
दिल में नहीं किसी के द्वेष—
यह है मेरा भारत देश।

कितना सुन्दर 'रजनी' नाम

● नीलम कुमारी प्रथम वर्ष कला

कितना सुन्दर रजनी नाम !
मातृ स्नेह से वंचित होकर
वे बच्चे, जो भटक रहे थे,
दीन-हीन रहने के कारण
कुछ आँखों में खटक रहे थे,
उन बच्चों को मातृ-स्नेह दे
तुमने खूब किया है काम !
कितना सुन्दर रजनी नाम !

वे बच्चे, जो चाह रहे थे
प्रगति-मार्ग पर कदम बढ़ाना,
पर अभाव के कारण उनको
नहीं मिला था कहीं ठिकाना,
उन उठते-गिरते बच्चों के
तुमने हाथ लिये हैं थाम।
कितना सुन्दर रजनी नाम !

वे बच्चे भी एक समय तो
हिन्द देश का नाम करेंगे,
रजनी के कारण वे नभ में
खूब सजेंगे औ' चमकेंगे,
विस्तृत नभ के उन तारों को
पिला दिया समता का जाम।
कितना सुन्दर रजनी नाम !

बिजली

● नीलू झा प्रथम वर्ष कला

बड़ी शरम की बात
कि बिजली—बड़ी शरम की बात !

जब देखो, गुल हो जाती हो,
ओढ़ के कम्बल सो जाती हो,
नहीं देखती हो, यह दिन है
या है काली रात
कि बिजली—बड़ी शरम की बात !

हम किताब पढ़ते रहते हैं
या खाना खाते रहते हैं,
पता नहीं चलता, थाली में
किधर दाल या भात
कि बिजली—बड़ी शरम की बात !

जाओ, मगर बता कर जाओ,
कुछ तो शिष्टाचार दिखाओ,
नोटिस दिए बिना चल देना
है भारी उत्पात
कि बिजली—बड़ी शरम की बात !
अरी, हाँ, बड़ी शरम की बात !

इम्तहान

रंजू कुमारी प्रथम वर्ष कल।

यह गर्मी का मौसम है—
इम्तहान का मौसम है।

तनकर गर्मी आयी, जी,
आँधी - लू ले आयी, जी,
घर से नहीं निकलना, जी,
बाहर नहीं टहलना, जी—
इम्तहान का मौसम है !

मुन्नी को आँखें नम हैं,
इम्तहान का क्या गम है ?
अब तक मौज मनायी, जी,
अब ना करो ढिठाई, जी—
इम्तहान का मौसम है !

खेल - कूद अब बन्द करो,
पढ़ो - लिखो, आनन्द करो,
तुमको आगे बढ़ना है,
अपना जीवन गढ़ना है—
इम्तहान का मौसम है !
इम्तहान का मौसम है !

मैं पीता नहीं हूँ, पिलायी गयी है

● शबनम कुमारी वर्मा

इन्टर कला

हाँ, दुर्भिक्ष, युद्ध और महामारी ने उतनी हानि नहीं पहुँचायी है, जितनी मदिरा ने, और अब तो स्मैक! बाप रे! क्या होगा? लेकिन होगा वही, जो आप और हम चाहेंगे। सरकार को सहयोग दीजिए, ताकि एक भयंकर राष्ट्रव्यापी समस्या का समाधान निकल सके।

आधुनिक युग में चरस गाँजा, हशीश, हेरोइन, कोकिन, अफीम एवं स्मैक की लत चरमसीमा पर है। सम्पूर्ण ससार में नशे के सेवन कर्त्ताओं की संख्या महामारी की तरह फल रही है। बिश्व के लगभग सभी देश मादक पदार्थों से ग्रसित होते जा रहे हैं। यह बुराई युवा वर्ग को कहाँ तक ले जायगी, इसकी कल्पना सर्वथा असह्य है। गेलेस्टोन का कथन तो हमलोगों को बिच लत कर देता है-"दुर्भिक्ष, युद्ध तथा महामारी—इन तीनों ने मिलकर उतनी हानि नहीं पहुँचाई, जितनी अकेली मदिरा ने पहुँचाई।"

मादक पदार्थों के सेवनकर्ताओं की संख्या बढ़ती ही जा रही है, खासकर विश्वविद्यालय-छात्र एवं छात्राएँ और महानगरों के वासी अधिक प्रभावित हैं। ये मादक पदार्थ लोगों को अपने शिकंजे में जकड़ते ही जा रहे हैं—

(i) पेय मादक पदार्थ—शराब, ताड़ी, भाँग आदि।

(ii) खानेवाले मादक पदार्थ-कोकिन, अफीम, भाँग आदि।

(iii) धुएँ के रुप में प्रयोग होने वाले मादक पदार्थ—चरस, गाँजा, बीड़ी, सिगरेट आदि।

(iv) रासायनिक पदार्थ एवं नशीली गोलियाँ-नींद की गोलियाँ (ओस्लिप), इंजेक्शन आदि।

१९८३ ई० में इण्डियन कौंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च के अनुसार दिल्ली विश्व-विद्यालय में ३३% छात्र नशे के आदी हैं। यह संख्या पटियाला मेडिकल कॉलेज में ७२% कानपुर मेडिकल कॉलेज में ४२% तथा वहाँ के आई० आई० टी० में ६१.४% है। इसी तरह विदेशों में भी अधिकांश लोग मादक पदार्थों से ग्रसित हैं। अमेरिका में ७० करोड़ ६० लाख लोग नशे के आदी हैं। आजकल केवल उच्च वर्ग के ही नहीं, बल्कि निम्न वर्ग के लोग भी नशे के आदी हो गए हैं। छात्र एवं छात्राएँ भी नशीली गोलियों का सेवन रात में जागने के लिए करते हैं। मादक पदार्थों का

उत्पादन करने वाले मुख्य देश हैं—सिसली, अमेरिका, फ्राँस, जापान, पेरु, नार्वे इत्यादि।

भारत में बिकने वाले हशीश एवं स्मैक पाकिस्तान से आते हैं। मादक पदार्थों का अवैध व्यापार करने वाले माफिया गिरोहों पर कई बार छापा पड़ने पर करोड़ों के मादक पदार्थ बरामद होते हैं, परन्तु फिर भी इनका अवैध व्यापार कम होने के बजाय और घना ही होता जा रहा है।

मादक पदार्थों का प्रयोग करने से केवल एक ही व्यक्ति को हानि नहीं पहुँचती, बल्कि परिवार, समुदाय, समाज और इस तरह राष्ट्र की प्रगति में बाधा होती है। अगर किसी परिवार के एक व्यक्ति को नशे में चूर परिवार के सदस्य देखते हैं तो परिवार के बच्चों पर इसका प्रभाव व्यापक रुप से बुरा ही पड़ता है। नशेबाज नशे के आदी होकर प्रतिदिन मादक पदार्थों का प्रयोग करने लगते हैं जिससे आर्थिक दशा दयनीय हो जाती है तथा पारिवारिक वातावरण कलहपूर्ण हो जाता है। अधिकांश घर बर्बाद हो जाते हैं। बच्चों को भी नशे की लत लग जाती है। वे स्मैक जैसे मादक पदार्थों के शिकार हो जाते हैं। पैसे नहीं मिलने से वे अनेक प्रकार के कुकर्म करेंगे। इससे अनेक प्रकार की समस्याएँ तो उठेंगी ही मादक पदार्थ के सेवन से अनेक प्रकार के रोग भी उत्पन्न होते हैं। सिगरेट पीने वालों को फेफड़ा कैंसर हो जाता है। लैरिंजिन्यल कैंसर और ओठों का कैंसर भी हो जाता है। सिगरेट पीने से फैरेन्जाइटिस और खाँसी की भी बीमारी हो जाती है। मादक पदार्थ शरीर को विकलांग बना देते हैं। आने वाली पीढी पर भी इसका असर पड़ता है। इससे अनेक प्रकार के मानसिक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। ये शरीर को ककाल एवं सवेदनशून्य बना देते हैं। मादक पदार्थों का सेवन करने से कितने ही लोगों की मौत हो जाती है। अगर यही स्थिति निरन्तर रही, तो भविष्य के लिए ये घातक सिद्ध हो सकते हैं।

मादक पदार्थों के सेवनकर्ताओं की संख्या इतनी कसे हो गई इसके पीछे कोई कारण या प्रेरक तो है ही, जो मादक पदार्थों के सेवन को बढावा दे रहा है। इसके पीछे युवा वर्ग ही क्यों ज्यादा आकर्षित है, इसके निम्नलिखित कारण हैं—

(i) युवा सिनेमा एवं पोस्टर पर शराब, सिगरेट आदि के चित्र देखते हैं जिसके युवा वर्ग के मानसिक स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। वे नकल करके नशीले पदार्थों के आदी हो जाते हैं।

(ii) बुरी संगति में भी पड़कर कितने छात्र नशीले पदार्थों का सेवन करने लगते हैं। आरम्भ में युवा वर्ग के छात्र या अन्य लड़के शौक के रुप में, क्रीड़ावृत्ति के रुप में मादक पदार्थों का उपयोग करते है, परन्तु आदत के शिकार हो जाते हैं।

(iii) पार्टियों एव क्लबों में परिवार के सभी सदस्य जाते हैं और अपने को धनवान एवं आधुनिकता का प्रतीक मानकर फैशन के तौर

पर वे मादक पदार्थों का सेवन करते हैं जिससे बच्चों पर इसका असर पड़ता है। वे भी नशे के आदी हो जाते हैं।

(iv) सिगरेट आदि बनाने की विधि पुस्तक से पढ़कर उसका प्रयोग सीखकर और उसकी ओर आकर्षित होकर पीने के आदी हो जाते हैं।

(v) मनुष्य में कुछ अप्रत्याशित करने की सहज ललक होती है। इसके पीछे मनोवैज्ञानिक कारण है। एक बार मादक पदार्थों की गिरफ्त में आ जाने के फलस्वरुप छूटना मुश्किल हो जाता है। कभी-कभी कार्य-विशेष की नीरसता और ऊब को मिटाने के लिए विपथन और विचलन के रुप में मादक पदार्थों का सेवन करने लगते हैं।

(vi) पारिवारिक कारक के अन्तर्गत अनेक कारण हैं जो नशे की ओर अग्रसर होने को प्रेरित करते हैं। आज का टूटता हुआ परिवार और उसके फलस्वरुप व्यक्तिगत परिवार का बनना भी एक बहुत बड़ा कारण है। आज माता-पिता शिक्षित होने के बावजूद समय के अभाव के कारण यह भूल जाते हैं कि उन्हीं के बच्चों में एक बदलाव आ रहा है तथा अपनी हताशा और व्यग्रता का निदान युवा को नशे की गोलियों में नजर आता है।

(vii) एक बहुत बड़ा कारण है बेरोजगारी की बढ़ती समस्या, जो सामाजिक विषमता के कारण एक बुद्धिमान और अच्छे युवक को भी विद्रोह के स्वर में नशे में डूबने के लिए प्रेरित करती है।

(viii) सबसे महत्वपूर्ण कारण है सक्रिय माफिया गिरोह, जो मादक पदार्थों का अवैध व्यापार करते हैं। आज स्मैक, जो नशे की दुनिया का ताज है, तेजी से मनुष्य को अपने जहर का शिकार बनाता जा रहा है। स्मैक के बारे में कहा जाता है कि यह एक ऐसा नशा है जो किसी व्यक्ति को मौत के बाद ही छोड़ सकीता है। इसी स्मैक या अन्य मादक पदार्थों की तस्करी देश में व्यापक रुप से हो रही है। ये गिरोह मात्र तस्करी ही नही करते हैं, बल्कि शिक्षण संस्थाओं या हास्टलों में पड़े रहते हैं जो युवा वर्ग को पहले स्वाद के तौर पर चखने को विवश कर नशे के आदी बना देते हैं। माफिया गिरोह अति प्राचीन हैं। गिरोह का जन्म सर्वप्रथम सिसली में नौवीं शताब्दी में हुआ। इन माफिया गिरोहों का पतन क्यों नहीं होता है, इसके पीछे भी बहुत से कारण हैं। ये चाहें तो किसी देश की सत्ता भी आसानी से पलट सकते हैं। इनका देश के बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों से लेकर प्रशासनिक एव अन्य विभागों से अप्रत्यक्ष सम्बन्ध बताया जाता है जो गिरोहों को सक्रिय बनाने में मदद करते हैं। ये कानून की गिरफ्त से भी बच जाते हैं।

मादक पदार्थ युवा वर्ग की जिन्दगी को गुमराह बना रहे हैं। नशे का अवध व्यापार कर असामाजिक तत्व मानवता को पतन की राह पर लिये जा रहे हैं। इसे प्रतिबन्धित करना अत्यन्त आवश्यक है। सर्वप्रथम सरकार, समाज, परिवार को अपना दायित्व निभाना होगा। सरकार ने तो मादक पदार्थों पर अनेक

कानून बना रखे हैं। अमल करना जनता का काम है। सबसे पहले सरकार को माफिया के सक्रिय संगठित गिरोह को समाप्त करना होगा। जनता का जागरुक होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इससे यह पता चलेगा कि कहाँ पर नशीले पदार्थों का अवैध व्यापार हो रहा है। इसकी खबर पुलिस को दी जाय।

अध्यापक, माता-पिता आदि का उत्तर-दायित्व होता है कि अगर बच्चे नशे के आदी हो गये हैं, तो हस्तक्षेप करें और इसकी जानकारी उन संस्थाओं को दे जिनसे नशा बन्दी का प्रचार-प्रसार हो।

गोपाल रायजी का ठीक ही कहना है कि अगर सभी व्यक्ति दृढ़-संकल्प कर लें, तो मादक पदार्थों से छुटकारा पा सकते हैं। यह एक संयुक्त समस्या है, अतः सरकार, समाज, व्यक्ति—सभी को सयुक्त होकर इसका निराकरण करना होगा।

अनाचार का अन्त अनाचार से नहीं होता। सुन्दर लिद्धि के लिए साधन की शुद्धता आवश्यक है

: अभिनव

अपनत्व का बोध

● नीलम जायसवाल

स्नातक कला

तुम आओगे, मेरे दोस्त,
जरुर आओगे !
मैं जानता हूँ,
मेरे मरने के बाद,
जब मेरी लाश के इर्द - गिर्द
मेरे अपने - पराये, सभी
मौन मातमी मुद्रा में होंगे,
तुम जरुर आओगे,
और
मुझे यकीन है,
मेरे उठ जाने के शोक में
अपनी आँखों से
आँसू की दो बूँदें ढरका
अपना होने का
अहसास जताओगे—
मेरी खामियों की नहीं,
खूबियों की चर्चा
अपनी हिचकियों में करोगे !
मैं जानता हूँ, मेरे दोस्त—
आदमी
अपने मतलब का यार होता है
और आज का आदमी
आदमीयत का नहीं,
खुदगर्जी का शिकार होता है,
मगर
हकीकत तो यह है, मेरे दोस्त,
कि आदमीयत झेलने वाला
हर जिन्दा शख्स
जिन्दगी भर गुनाहों में पलता है
और
उसके गुजर जाने के बाद
उसकी अहमियत, असलीयत
और उसकी खूबियाँ
किताब की शक्ल में
यादगार भर रह जाती हैं !
मैं जानता हूँ, मेरे दोस्त,
यह कोई नयी नहीं,
पुरानी परम्परा है
जिसे तुम बखूबी निभा रहे हो,
मेरी जिन्दगी में नहीं,
मेरी याद में
घड़ियाली आँसू बहा रहे हो,
फिर भी
मैं जानता हूँ, मेरे दोस्त—
तुम आओगे
और जरुर आओगे !

भाषा

● नूतन कुमारी

स्नातक प्रतिष्ठा

युगों - युगों से
प्रान्त - प्रान्त में,
देश - देश में
बनती और सँवरती आयीं
भाषाएँ अनेक।
जैसे - जैसे लोग बदलते,
भाषा के भी रूप बदलते,
भिन्न - भिन्न क्षेत्रों के प्राणी
भिन्न - भिन्न भाषा ले चलते;
व्यंग्य - हँसो हँसकर औरों पर
निज भाषा को श्रेष्ठ मानते,
हो केवल उसकी ही उन्नति—
वे तो केवल यही जानते !

वैसे,
लोगों की भाषाएँ
भले ही अनेक हैं,
पर सबके अन्तर की
भाषा तो एक है।
हँसी चाहे जैसी हो,
हँसने की भाषा एक;
दर्द चाहे जैसा हो,
आँसू की भाषा एक।
मन के हैं भाव एक,
सुख - दुख की भाषा एक,
भाषा हो जैसी भी,
इसकी परिभाषा एक !

प्रमुख भाषाओं के प्रमुख कवि

संस्कृत	कालिदास	बंगला	रवीन्द्रनाथ टैगोर
हिन्दी	तुलसीदास	फारसी	शेख सादी
उर्दू	गालिब	लैटिन	वर्जिल
अँग्रेजी	शेक्सपियर	जर्मन	गेटे
ग्रीक	होमर	इटैलियन	दाँते
फ्रेंच	ब्रूधोम	पंजाबी	वारिसशाह

● सुनीति कुमारी

स्नातक द्वितीय खण्ड प्रतिष्ठा

एक अदद व्यंग्य का सवाल

● प्रो० अमर कुमार वनस्पतिशास्त्र विभाग

जब अपने सम्पादक मित्र विश्वासजी से पता चला कि वे 'रजनीगंधा' के लिए एक श्रेष्ठ व्यंग्य रचना की तलाश में हैं, तब मेरी कन्फ्यूज्ड तबीयत को एक किनारा मिल गया। मुझसे अधिक श्रेष्ठ व्यंग्य लिखनेवाला भला और कौन हो सकता है! लेकिन, जनाब, जब अलग-अलग 'एंगिल' से भी ब्रेन पर प्रेशर डालने के बाद कोई प्लॉट हाथ नहीं आया, तब लगा कि दिमाग की धरती अकालग्रस्त हो गई है और ..

एक लम्बे अरसे के बाद अचानक तमन्ना होने लगी कि कुछ ऐसा करूँ जिससे रातोंरात नाम हो जाय। तरह-तरह के विचार दिमाग में आते और पल भर में धराशायी हो जाते। मैं हाथ मलता रह जाता। मन हिरण की तरह लंबी-लंबी कुलाँचे भर रहा था। समझ में नहीं आ रहा था, क्या करूं, क्या न करूँ! एक पल को खुद को धुरंधर नेता के रुप में पाता तो दूसरे ही पल महान् दार्शनिक अरस्तू से भी दो कदम आगे निकल जाता। क्षणिक उपलब्धि ही सही, लेकिन महसूस होता कि विश्व का सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व मुझमें ही सिमट आया है। कभी अपने को कपिल-देव के चौके-छक्के बायें हाथ से बनाता देखता तो कभी दारा सिंह को अखाड़े में पछाड़ने लगता। और लेखन का तो, बस, जवाब ही नहीं। खुद लिखता और उसकी ओर प्रशंसा भरी निगाहों से देखता, पर, वाह री तुकबन्दी! जब वीर रस की गाथा लिखता तो लोग उसे परिहास समझ बैठते और जब हास्य रस लिखता तो पाठकों के चेहरे पर हृदय-विदारक करुण रस छा जाता। फिर भी, मैं आज शुक्रगुजार हूँ और आजन्म रहूँगा अपने पाठकों का, जिनके धैर्य और सहयोग के कारण मेरे हृदय से कालिदास, कबीर, मीरा, सूर तुलसी, गालिब की आत्माएँ रह-रहकर फूट पड़ती हैं।

तो, मैं अपनी उमंगों, तरंगों, में बहा ही जा रहा था कि अचानक मेरी मुलाकात एक सम्पादक मित्र (विश्वासजी) से हो गई। बातों-बातों में पता चला कि मेरे मित्र अपनी पत्रिका के लिये एक श्रेष्ठ व्यंग्य-रचना की तलाश में हैं। बस, मेरी कन्फ्यूज्ड तबीयत को एक किनारा मिल गया। मेरे प्रिय मित्र को एक व्यंग्य-रचना की जरुरत है तब तो मैं कम से कम सर्वश्रेष्ठ तो हूँ ही। सोचा, इस सुनहरे मौके को हाथ से फिसलने न दूँ। मैंने अपने मित्र से वादा किया कि मैं जो कुछ भी लिखूँगा, वह वही होगा जिसकी उन्हें तलाश थी, चाहे वे मानें या न मानें।

और मैं उछलता कमरे में आकर आनन-फानन व्यंग्य लिखने बैठ गया। अलग-अलग

'एंगिल' से ब्रेन पर प्रेशर डालने लगा। पल भर में मस्तिष्क के व्यंग्य-केन्द्र से चित्र-विचित्र आवाजें आने लगीं, लेकिन बदकिस्मती से कोई भड़कता-फड़कता प्लॉट ही नजर नहीं आ रहा था। जब भी कुछ सोचकर लिखना प्रारंभ करता तो ऐन मौके पर दिमाग की धरती अकालग्रस्त हो जाती। रचना अधूरी रह जाती और मैं उसे रद्दी की टोकरी में फेंक डालता जहाँ वह अपने पूर्वजों के अस्थिपंजर से जा मिलती। इस तरह दिन गुजरते जा रहे थे और वह दिन भी नजदीक आता जा रहा था जब मुझे अपनी व्यंग्य रचना प्रिय मित्र को दे देनी थी। आखिर 'विश्वास' के विश्वास को धक्का कैसे लगने देता! लेकिन क्या लिखूँ, समझ में नहीं आ रहा था। बड़ा गुस्सा आ रहा था अपने-आप पर—एक व्यंग्य तक नहीं लिख सकता हूँ—लानत है!

अन्त में सोचा, अपने—आप पर ही एक व्यंग्य लिख डालूँ, और पलक झपकते ही मेरा प्लान किसी सर्कस के जोकर की तरह मेरी आँखों के सामने नाचने लगा। मुँह से भोंडी और ऊँची आवाजें निकलने लगीं। अपने ही गालों पर थप्पड़ मारने लगा और अजीबोगरीब हरकतों से खुद को हँसाने की कोशिश करने लगा। पर, मुझे रोना आ गया। अब आप ही बताइये, अगर मैं सर्कस के बढ़िया जोकर की तरह करने लगूँ, मछलियाँ निगलने और फिर जिन्दा ही उगलें देने की बात लिखूँ, तो क्या पाठक हँसने लगेंगे। तब तो यह भी बताना जरुरी हो जाएगा कि हे प्रिय पाठको! अब आप हँसें, क्यों कि आप जो पढ़ रहे हैं, वह व्यंग्य है।

फिर सोचा, चलो, फिल्मों पर ही कुछ लिख डालूँ। लेकिन, फँला हीरो ने फलाँ अवसर पर फँला हीरोइन के गाल पर चिकोटी काटी या फिर फलाँ डायरेक्टर ने फलाँ मुहूर्त पर सेब खाया या चूना चाटा, इससे मेरे पाठकों पर क्या फर्क पड़ता है! फिल्में थियेटर में ही क्या कम बोर करती हैं जो मैं इनमें और नमक-मिर्च लगाकर पाठकों का जायका बर्बाद करूँ! और फिर, आज की फिल्में—बाप रे बाप! इन में तो कोई गुंजाइश नहीं। भाई साहब, मुझे व्यंग्य लिखना है व्यंग्य,। इन बुद्धिजीवियों के चक्कर में नहीं पड़ना है। खैर!

लेकिन, अगर यह भी न लिखूँ तो आखिर लिखूँ क्या? कुछ सूझता ही नहीं। क्या मैं वास्तव में व्यंग्य नहीं लिख सकता? मैंने सोच कैसे लिया था कि मैं व्यंग्य भी लिख सकता हूँ? मेरे हाथ-पाँव ढीले पड़ते जा रहे थे। अब क्या मुँह दिखाऊँगा अपने सम्पादक मित्र को! क्या सम्पादक पर ही व्यंग्य लिख डालूँ? बाप रे बाप! यह तो मैं अंगारों में उँगलियाँ घुसेड़ रहा था। वह तो रचना देखते ही फाड़कर फेंक देगा। फिर मेरा क्या होगा, मेरी ख्याति का क्या होगा? हे भगवान, अगर इस बार किसी तरह मुक्ति दिला दे, तो सात जन्म तक व्यंग्य न लिखने की कसम खा लूँ। अब ऐसे में क्या व्यंग्य करूँ जब खुद ही एक परिहास का विषय बन गया हूँ! आज मुझे वास्तव में पता चल गया कि व्यंग्य लिखना भारी जोखिम है। लेकिन अब मैं अपने सम्पादक मित्र विश्वास को साफ-साफ कह दूँगा कि यह काम अपने बूते का नहीं

है। काश, आज अगर मेरे मित्र मुझे यह खबर सुनाते कि किन्हीं कारणों से वे पत्रिका निकालने में असमर्थ हैं! आह! मैं उनकी असमर्थता पर कितना प्रसन्न होता! लेकिन, वे तो पत्रिका निकालेंगे ही। क्या करुँ, किधर जाऊँ, कहाँ अंडरग्राउण्ड होऊँ?

अचानक दरवाजे पर आहट हुई। मैं चौंक गया। मेरे सम्पादक मित्र मुस्कुराते हुए मेरी ओर आ रहे थे। साक्षात् यमराज को देख मैं घबरा कर बैठ गया। उनके मुख पर व्यंग्य के भाव थे क्योंकि मेरे पास व्यंग्य का अभाव था। वाह रे, उड़ा ले मेरी हँसी! कभी मैं भी.....। मगर उन्होंने रंगीन कागजों में लिपटा एक पुलिंदा मेरी ओर बढ़ा दिया। मैं चुपचाप उसे खोलने लगा। देखा, एक पत्रिका थी—"रजनीगंधा"। मित्र ने कहा—'काफी मिहनत के बाद पत्रिका निकाल पाया हूँ। एक प्रति तुम्हारे लिए।' मैं हर्ष और आभार से उनकी ओर देखता रह गया, क्योंकि इसके बाद पत्रिका निकलने की बात नहीं थी।

हर बच्चा इस सन्देश को लेकर आता है कि ईश्वर अभी मनुष्य से निराश नहीं हुआ है।

—टैगोर

सामाजिक तनाव : एक मनोवैज्ञानिक दृष्टि

● प्रो० मणिमाला
मनोविज्ञान विभाग

तनाव वस्तुतः परस्पर-विरोधी विचारों के कारण उत्पन्न होता है। आवश्यकता है सामाजिक चिन्तन के बदलाव की, ताकि समाज की विभिन्न इकाइयाँ एक सूत्र में बँध सकें।

सामाजिक तनाव वह सामाजिक स्थिति है जिसमें व्यक्ति या समूह अपने से भिन्न व्यक्ति या समूह पर हिंसा करके या हिंसा की धमकी देकर अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है। किसी व्यक्ति या समूह को अपने से भिन्न समझने या देखने की क्रिया जटिल सामाजिक प्रत्यक्षीकरण की क्रिया है। प्रत्यक्षीकरण हमारे वैयक्तिक और सामाजिक जीवन की अनुभूतियों और अन्त क्रियाओं का एक महत्वपूर्ण घटक है। हमारे चारों ओर जो भी वस्तुएँ होती हैं उन सबों का हमारे लिए एक विशेष अर्थ, एक विशेष स्थान और एक विशेष महत्व होता है। इन सभी वस्तुओं में सबसे प्रमुख स्थान व्यक्ति का होता है। हमारी अधिकांश प्रक्रियाएं दूसरे व्यक्ति के प्रति होती हैं और हम सदैव ऐसे उत्तेजक व्यक्तियों से घिरे हुए होते हैं। हमारी प्रतिक्रियाएं और हमारे व्यवहार व्यक्तियों के स्वभाव से प्रभावित होते हैं। इनके द्वारा हमारे व्यवहार संचालित और नियंत्रित होते हैं। दूसरे व्यक्तियों के प्रति हमारी कुछ सहभावनाएँ होती हैं और हम अपनी प्रतिक्रियाओं के प्रति उनकी कुछ खास प्रतिक्रियाओं की सम्भावना रखते हैं। इस तरह हमारा सामाजिक अभियोजन सरल हो पाता है।

सामाजिक परिपेक्ष्य में अन्तर्वैयक्तिक क्रिया-प्रतिक्रिया के दो प्रमुख पक्ष होते हैं—(क) व्यक्ति का ज्ञान तथा (ख) व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं की सम्भावनाओं का अनुमान। अन्तर्वैयक्तिक क्रियाओं का विकास बहुत ही मन्द गति से होता है। इसका प्रथम चरण वातावरण से व्यक्ति को भिन्न करने से प्रारम्भ होता है। जहाँ तक व्यक्ति के भौतिक स्वरुप के विभेदीकरण का प्रश्न है, वह जन्म के कुछ महीनों के बाद प्रारम्भ हो जाता है जिसके आधार पर बच्चे किसी व्यक्ति को निर्जीव वस्तुओं से अलग कर पाते हैं। किन्तु जहाँ तक व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक अस्तित्व का प्रश्न है, यह एक विलम्बित क्रिया है जो वर्षों तक चलती रहती है। इस प्रक्रिया की दो अवस्थाएँ होती हैं—

(क) व्यक्ति को उसके सामाजिक परिपेक्ष्य से अलग करना।

(ख) स्वयं को अन्य व्यक्तियों से अलग करना।

जहाँ तक पहली अवस्था का प्रश्न है, यह एक सरल क्रिया है किन्तु जहाँ तक अपने को दूसरे व्यक्तियों से अलग करने का प्रश्न है, यह सामाजिक पृष्ठभूमि के ज्ञान पर आश्रित है और इसके लिए सामाजिक परिस्थिति का अर्थपूर्ण ज्ञान आवश्यक हो जाता है जो जटिल सामाजिक शिक्षण पर आधारित होता है। सामाजिक शिक्षण और अर्थज्ञान के बाद ही बच्चे सामाजिक प्रतिक्रियाओं को दुनिया में अभियोजित हो पाते हैं। सामाजिक शिक्षण के आधार पर उम्र-विकास के साथ-साथ बच्चों में विभेदीकरण की क्षमता बढ़ती जाती है। सामाजिक शिक्षण के कारण विभिन्न व्यक्तियों के प्रति उनका प्रत्यक्षीकरण विभिन्न प्रकार का हो जाता है। सामाजिक शिक्षण में विभेदीकरण के साथ साथ वर्णनात्मक तत्व भी संलग्न रहता है। बच्चों को दूसरे व्यक्तियों की भिन्नताओं का ज्ञान प्रथम चरण में भौतिक घटकों के आधार पर होता है। विभेदीकरण का दूसरा चरण पूर्व-पाठशालीय एवं पाठशालीय काल में विकसित होता है, किन्तु इस काल में विभेदीकरण किसी खास पद के रुप में होता है। बच्चे में यह विचार आता है कि वह भिन्न है और उसका दोस्त यादव है। ऐसा क्यों ? सामाजिक शिक्षण उसकी इस जिज्ञासा का समाधान जिस प्रकार करता है उससे जातीय भेद का विकास बच्चे में होने लगता है। सामाजिक शिक्षण के कारण जातिगत, धर्मगत, क्षेत्रगत विभेद का विकास होने लगता है।

प्रत्यक्षात्मक विभेद का ज्ञान सामाजिक स्थिराकृति पर आधारित है। हम अपने सामाजिक जीवन में किसी व्यक्ति का एक स्वतन्त्र इकाई के रुप में प्रत्यक्षीकरण नहीं करते हैं। हम उसे किसी वर्ग, जाति, समुदाय या राष्ट्रीयता की इकाई के रुप में देखते हैं। हमारा प्रत्यक्षीकरण बराबर एक सामाजिक स्थिराकृति के रुप में होता है। यह स्थिराकृति एक सामाजिक-सांस्कृतिक प्रपंच है। प्रारंभिक वर्षों से ही यह हमारे प्रत्यक्षीकरण को एक विशेष रुप से संगठित करता है तथा इसे विशेष रंग प्रदान करता हैं। स्थिराकृति के कारण हम किसी व्यक्ति की पहचान एक खास प्रकार से करते हैं; खास-विशेषताओं को उस पर आरोपित करते हैं और उन विशेषताओं को उस जाति, वर्ग या सम्प्रदाय के सभी लोगों पर आरोपित कर देते हैं।

सामाजिक स्थिराकृति हमारे प्रत्यक्षीकरण को इस हद तक प्रभावित करती है कि व्यक्ति की निजी विशेषताएँ गौण हो जाती हैं और वे सामूहिक विशेषताएँ, जो उस समुदाय के लिए सामाजिक शिक्षण के द्वारा बचपन से हमने जानी हैं, निर्धारक रुप धारण कर लेती हैं। चूँकि समाज और संस्कृति ऐसी स्थिराकृतियों को निर्धारित करते हैं, इसलिए किसी समाज या संस्कृति के सभी व्यक्ति इसके प्रभाव में आते हैं। चूँकि हमारा प्रत्यक्षीकरण हमेशा किसी-न-किसी पृष्ठभूमि या संदर्भ में होता है, इसलिए ये स्थिराकृतियाँ हमारे प्रत्यक्षीकरण के संदर्भ-फ्रेम बन जाती हैं।

आज सम्पूर्ण भारतीय समाज जातिगत, सम्प्रदायगत और क्षेत्रगत तनाव से ग्रस्त है। समाज सिर्फ व्यक्तियों का समूह नहीं है। यह समूह के बीच स्थापित सम्बन्धों की एक जटिल व्यवस्था है। समाज का निर्माण एक नहीं, अनेक इकाइयों से होता है और ये इकाइयाँ समरुप नहीं होतीं। समाज की इन इकाइयों की क्रियाशीलता एवं पारस्परिक सम्बन्धों के स्वरुप भी असंख्य होते हैं। इन असंख्य भिन्नताओं के बीच सामाजिक जीवन का ताना - बाना बना रहता है और सामाजिक परिपेक्ष्य में व्यक्ति एक दूसरे के साथ अन्तर्क्रिया करते रहते हैं। यह अन्तर्क्रिया प्रतिस्पर्धात्मक, संघर्षात्मक तथा तनावपूर्ण बन जाती है। तनाव वस्तुतः एक मानसिक स्थिति है जिसमें व्यक्ति अपने मस्तिष्क में किसी व्यक्ति या समूह के सम्बन्ध में एक दुराव या खिचाव-सा महसूस करता है जिसके फलस्वरुप उस व्यक्ति या समूह के साथ उसका अनुकूलक, स्वाभाविक अन्तःक्रिया स्थापित नहीं हो पाती है। वास्तव में यह तनाव परस्पर विरोधी-विचार, स्वार्थ, जीवन-आदर्श, मूल्य एवं धर्म, जाति एवं प्रजाति सम्बन्धी भिन्नताओं के फलस्वरुप उत्पन्न होता है। बीसवीं शताब्दी के इन अन्तिम वर्षों में धार्मिक नेताओं का प्रभाव करीब करीब नगण्य होता जा रहा है। सामाजिक-सांस्कृतिक शिक्षण की कठोरता भी कम हुई है किन्तु तनाव बढ़ा है। गौर करने से स्पष्ट होता है कि जो सामाजिक विभेद धार्मिक लोगों ने पैदा किया था, उस विभेद की आग में स्वार्थ-वशीभूत राजनीतिज्ञ घृणा की आहुति देकर उस और भी प्रज्ज्वलित कर रहे हैं। भी कोई सामाजिक व्यवस्था तत्कालीन अनिवार्यता का आधार होती है। पुरानी व्यवस्था को स्वार्थ के कारण पुनर्जीवित करना, शोषक और शोषित का वर्ग-भेद पैदा करना आज के सामाजिक तनाव का कारण है।

आवश्यकता है सामाजिक चिंतन को बदलने की। राजनीतिज्ञों एवं समाज-सुधारकों का यह दायित्व है कि जाति-भेद के सूखते पेड़ को सूख जाने दें, उसमें स्वार्थ की खाद न डालें। प्रारंभिक समाजीकरण के काल से छोटे बच्चों में जातिगत विभेद को न पनपने दिया जाय। पाठशालाओं में नामांकन सिर्फ वास्तविक नाम से किया जाय। जाति-निर्धारक पद नाम का बहिष्कार किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम में महान पुरुषों की जाति एवं धर्म का वर्णन नहीं किया जाना चाहिए। उन महान व्यक्तियों की कृतियों से सम्बन्धित पक्षों को ही उजागर करना चाहिए। ऐसा परिवर्तन प्रत्यक्षीकरण के सामाजिक स्थिराकृतिक आधार को क्रमशः कमजोर करेगा। यह एक क्रमिक प्रक्रिया होगी जो समाज को विभिन्न इकाइयों को एक सूत्र में बाँध सकेगी तथा सामाजिक सहयोग, पारस्परिक प्यार और समझदारी का विकास कर सकेगी।

जीवन विश्व की सम्पत्ति है—प्रमाद से, क्षणिक आवेश में या दुख की कठिनाई से उसे नष्ट करना तो ठीक नहीं।

: प्रसाद

छल-छन्द

● राधा कुमारी

स्नातक प्रथम खण्ड प्रतिष्ठा

छात्रा : दोहा छन्द—

इत आवत चलि जात उत, नहीं करत है क्लास।
गप्प करत, शॉपिंग करत, पिया मिलन को आस ॥

छात्र : रोला छन्द—

नहीं करेंगे क्लास, अजी टीचर का डर क्या ?
नहीं करेगा पास, बचेगा वह टीचर क्या ?
कविता से क्या लाभ, अजी, कुछ फिल्मी गाओ !
पढ़ लो बहुत किताब, यार, अब चिलम सजाओ !

शिक्षक : कुण्डलिया छन्द—

गयी खबर जब छात्र की, छोड़ चले निज क्लास।
झट रिक्शा पर चढ़ गये, प्रोफेसर विश्वास ॥
प्रोफेसर विश्वास, गये तब टाकिज शंकर।
दस वर्षों के बाद, निहारी फिल्म भयंकर ॥
बोले—इसमें नाच, गान की धार बह गयी।
पता नहीं जो चली, कहानी, कहाँ रह गयी ॥

कुलपति : चौपाई छन्द—

जय जय जय कुलपति भगवाना।
तुम पावरफुल कृपानिधाना ॥
प्रभु, ऐसो कछु करहु डिसीजन।
बिनहिं पढ़ाए पूरो वेतन ॥

वोट-भिक्षुक

● शिप्रा

प्रथम वर्ष कला

वह आता
दो टूक कलेजे के करता, चुनाव-क्षेत्र में आता !

दोनों हाथ जुड़कर हैं एक—चल रहा माथे टेक—
एक वोट पाने को— विधान सभा में जाने को—
जनता के आगे निज दामन फैलाता—
दो टूक कलेजे के करता चुनाव-क्षेत्र में आता।
साथ दो चमचे भी हैं खद्दर में लिपटाए—
बायें से वे धोती के पल्लू को पकड़े चलते,
और दाहिने कन्धे से लम्बी झोली लटकाए।

भूख से सूख होंठ जब जाते,
वोटर—भाग्य-विधाता से क्या पाते ?
बिना दूध की चाय पिए रह जाते !

माँग रहे हैं कभी वोट वे किसी द्वार पर खड़े हुए,
और भगा देने को उनको वहाँ विरोधी अड़े हुए।

ठहरो, मेरे पास है लाठी,
मैं 'माल' लूँगा—
एम० एल० ए० हो सकोगे तुम—
दूसरों के वोट मैं तुम्हारे पक्ष में डाल दूँगा !

परिचर्चा

शिक्षा-व्यवस्था : क्या परिवर्त्तन आवश्यक है ?

● छाया कुमारी स्नातक द्वितीय खण्ड प्रतिष्ठा

इन्टर की परीक्षा चल रही है-वर्ग स्थगित ··· डिग्री की परीक्षा चल रही है-वर्ग स्थगित ···· और मूल्यांकन केन्द्र-भ्रष्टाचार का केन्द्र ! समय पर पढाई नहीं, परीक्षा नहीं, रिजल्ट ! नहीं छात्र तबाह, अभिभावक तबाह, लेकिन व्यवस्थापक लापरवाह ! क्या मर्ज लाइलाज है ? ····· छात्रा छाया कुमारी के सवाल पर प्रस्तुत हैं कुछ छात्राओं के विचार !

हाँ, सरकार को सोचना चाहिए : मनीषा

'हाँ, राज्य सरकार या शिक्षा विभाग को अब इस सवाल पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए कि परीक्षाओं और उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन की वर्त्तमान पद्धतियाँ सही हैं या इनमें परिवर्त्तन की आवश्यकता है'—स्नातक द्वियीय खण्ड मनोविज्ञान प्रतिष्ठा की छात्रा मनीषा कहती हैं। अपने विचार व्यक्त करती हुई आगे कहती हैं—हमारे कॉलेज में तो कई सावधिक परीक्षाएँ होती हैं, लेकिन बहुत से कॉलेज केवल जाँच परीक्षा लेते हैं और बहुत से कॉलेज तो वह भी नहीं। छात्रों को चाहिए कि वे सावधिक परीक्षाओं का महत्व समझें और इनके आयोजन के लिए महाविद्यालय के अधिकारी पर दबाव डालें। इन परीक्षाओं के बहाने विश्वविद्यालय परीक्षा की तैयारी हो जाती है। मैं परीक्षा में किसी तरह की छूट के पक्ष में नहीं हूँ, लेकिन इतना अवश्य चाहती हूँ कि परीक्षार्थी जो उत्तर पुस्तिकाओं में लिखते हैं, उनकी सही जाँच हो। एक बात और चाहती हूँ कि परीक्षाएँ साल भर नहीं चलती रहें। इन्टर, डिग्री आदि सभी कक्षाओं की परीक्षाएँ एक साथ हों तो वर्ग अधिक स्थगित नहीं रहेंगे। अधिक समय मिलेगा पढ़ने-पढ़ाने के लिए। अभी सबसे जरुरी है कि लेट सत्र को ठीक किया जाय और परीक्षा-पद्धति में सुधार लाते हुए जाँच-कार्य में भी सुधार लाया जाय।'

कहाँ जा रही है शिक्षा : शैल झा

'यह बात तो साफ है कि टेस्ट परीक्षा से पहले कोर्स पूरा नहीं हो पाता, क्योंकि कॉलेज में पढ़ाई ही कितने दिन होती है ! तब इतना जरुर है कि कुछ कॉलेजों में टेस्ट के बाद भी एक्स्ट्रा क्लासेज की व्यवस्था होती है'—बतलाती हैं आर० के० कॉलेज की त्रिवर्षीय स्नातक विज्ञान (द्वितीय-खण्ड) की छात्रा शैल झा। शैल, जिन्होंने पूर्व में 'नवभारत टाइम्स' द्वारा प्रतिभा-प्रतियोगिता मे जिला में प्रथम स्थान प्राप्त कर महिला महाविद्यालय का नाम रोशन

किया था, आगे कहती हैं—'मैं टीचर्स के नोट्स जरुर पढ़ती हूँ, क्योंकि क्लास में पढ़ाये गए लेशन ज्यादा काम आते हैं। सिलेबस पूरा हो या नहीं, अपनी तैयारी करनी पड़ती है। तब, मैं चाहूँगी कि परीक्षा परीक्षा की तरह हो और उत्तर पुस्तिकाओं की भी जाँच ठीक से हो। किसी सेण्टर पर परीक्षा में कड़ाई रहती है तो किसी पर नकल की छूट। फिर इल्वैयुएशन के बारे में भी सुना जाता है कि केवल पैरवी-पुत्रों की उत्तर-पुस्तिकाओं पर ज्यादे मार्क्स बैठाये जाते हैं और अन्य पुस्तिकाएँ ठीक से पढ़ी भी नहीं जातीं। मेरी जैसी स्टुडेण्ट्स को यह सोचकर दुःख होता है कि छात्रों का क्या होगा और खुद शिक्षा का क्या होगा!'

व्यवस्था ही काली है : शबनम

'एकदम जरुरी है शिक्षा और परीक्षा की वर्त्तमान पद्धति को बदलना'—छूटते ही कहती हैं समस्तीपुर की स्नातक कला (द्वितीय खण्ड) की परीक्षार्थी शबनम कुमारी वर्मा। कुछ सोचकर वे अपनी बात जारी रखती हैं—'आज पढ़ाई की जो स्थिति है उससे लगता है कि छात्रों का भविष्य अन्धकारमय होता जा रहा है। क्या तुम नहीं महसूस करती, छाया, कि हमारे शिक्षक अपने-अपने दायित्व के प्रति उदासीन दिखाई देते हैं? अपने कॉलेज की बात छोड़ दो, लेकिन दूसरे कॉलेजों के छात्र पढ़ाई-लिखाई से क्या सन्तुष्ट दिखाई देते हैं? हर कॉलेज के छात्र बतलाते हैं कि आधा कोर्स भी पूरा नहीं होता है। और परीक्षा भी समय पर कहाँ होती है? जैसे-तैसे परीक्षा हो भी गयी तो रिजल्ट के लिए आठ आठ, नौ-नौ महीने तक छात्र झूलते रहते हैं। उत्तर-पुस्तिकाओं की जाँच के सम्बन्ध में बराबर शिकायतें मिलती रहती हैं। जब पैरवी पर ही रिजल्ट होगा, उत्तर पुस्तिकाओं की जाँच में गड़बड़ी होगी, तो छात्रों की योग्यता का निर्धारण कैसे होगा? पढ़ाई पूरी नहीं होने पर छात्र मन मसोसकर ट्यूशन पढ़ते हैं, बाजारु नोट्स और गाइड्स पढ़ते हैं, लेकिन उत्तर-पुस्तिकाओं की निष्पक्ष जाँच हो, इसकी व्यवस्था तो शिक्षकों और विश्वविद्यालय अधिकारियों को ही करनी है। वर्त्तमान व्यवस्था बिल्कुल काली ही है।'

कौन लाएगा परिवर्त्तन : नमिता

'क्यों मुझसे सच कहलाना चाहती हैं?—प्रश्न का उत्तर प्रश्न से ही देती हैं द्वितीय वर्ष कला की छात्रा नमिता। मेरे जिद ठान लेने पर शुरु करती हैं—'वैसी व्यवस्था में परिवर्त्तन की बात कर रही हैं जिसमें दस 'नकटे' एक नाकवाले की ओर उँगली उठाते हैं! यहाँ से वहाँ तक—हर शाख पर उल्लू के पट्ठे ही बैठे हैं। कौन परिवर्त्तन लाएगा? अब देखिए न, बिहार विद्यालय परीक्षा समिति तो समय पर ही रिजल्ट निकालकर छात्रों को कालेजों में पहुँचा देती है, लेकिन यहाँ से जो गाड़ी लेट होने लगती है वो पी-जी० तक पहुँचते पहुँचते दो साल लेट हो जाती है। परीक्षाओं से सम्बन्धित प्रक्रियाएँ साल भर चलती रहती हैं। कॉलेजों में हड़ताल के अलावे पढ़ाई बन्द रहती है परीक्षाओं के कारण मूल्यांकन कार्य के कारण, टेबुलेशन के कारण, उत्तर-पुस्तिकाएँ परीक्षकों के पास जाती हैं तो 'टेन्थ पेपर' (पैरवी) की गुंजाइश अधिक नहीं

रहती, लेकिन केन्द्रीयकृत मूल्यांकन में शिक्षक ही भ्रष्टाचार का नंगा नाच करते हैं। यह पद्धति बन्द होनी चाहिए। समय-सीमा की चेतावनी देकर परीक्षकों के पास ही उत्तर-पुस्तिकाएँ भेजी जायँ। परीक्षा वस्तुनिष्ठ [आब्जेक्टिव] प्रश्नों के आधार पर हो तो कम्प्यूटर से भी मूल्यांकन हो सकता है। सत्र को नियमित करने तथा श्रम समय, पैसे, छात्रों का भविष्य एवं शिक्षकों की मर्यादा—सबको बचाये रखने के लिए पूरी व्यवस्था में परिवर्त्तन लाना जरूरी है, लेकिन फिर वही सवाल – लाएगा कौन ?'

चिड़ियों की तरह हवा में उड़ना और मछलियों की तरह पानी में तैरना सीखने के बाद अब हमें इन्सानों की तरह जमीन पर चलना सीखना है। : राधाकृष्णन्

चाय

● प्रो० किरण कुमारी झा रसायनशास्त्र विभाग

पानी के बाद, आज सबसे सस्ता एवं सुलभ पेय है चाय–घर–परिवार के लिए भी और अतिथि–सत्कार के लिए भी। लेकिन देखिए, कहीं ऐसा तो नहीं कि जिसे आप चाय समझकर पी रही हैं,वह थोड़ी सी असावधानी के कारण आपके अन्दर जहर फैला रही है।

इस वैज्ञानिक युग में चाय को कौन नहीं जानता ! हरेक वर्ग के परिवार में इसकी उपयोगिता सामान्य हो चुकी है। पुराने जमाने में लोगों का स्वागत जहाँ दूध, शर्बत आदि से किया जाता था, आज वह स्थान चाय ने ले लिया है। इसलिए यह जानना जरुरी है कि आखिर कौन सा ऐसा गुण है, जिसके कारण चाय अधिक लोकप्रिय, उपयोगी हो गयी है। किसी भी समय मनुष्य चाय पीकर अपने को तरोताजा महसूस कर सकता है, ऐसी क्या खूबी है इसमें ?

तो सबसे पहले यह जान लें कि अच्छी चाय तैयार कैसे की जाती है। सर्वप्रथम दूध को खौला लें। उसे ढँक कर रख लें। पुनः छोटे मुँह वाले बर्त्तन में पानी को खौला लें। जब पानी खौलने लगे तब चूल्हे से उतार कर उसमें चाय पत्ती मिलायें। ढँक कर चार-पाँच मिनट छोड़ दें। चाय की प्याली में इच्छानुसार चीनी एवं दूध को मिला कर चाय छान लें। यह चाय-स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद होगी।

अक्सर लोग दूध, चीनी एवं पानी को साथ खौलाते हैं। खौलते हुए पानी में चाय की पत्ती डाल कर पुनः खौलाते हैं। कोई रंग लाने के लिए, तो कोई कड़ी करने के लिए लेकिन ऐसी चाय पीने का मतलब है– बूँद-बूँद कर जहर पीना। जब तक पी, पी, और जब जहर का घड़ा भर गया, तो·····!

आखिर ऐसा क्यों होता है? एकदम सीधी-सी बात है। पानी १००°c पर उबलता है। इसमें दूध और चीनी मिला देने पर इसका B. P. १००°c से अधिक हो जाता है। १००°c के अन्दर ही चायपत्ती गर्म पानी के प्रतिक्रिया-स्वरुप "कैफीन" नाम का एक रसायन देती है। वैसे, कैफीन कम मात्रा में लेने पर शरीर के लिए लाभदायक है। कैफीन शरीर में जाने पर शरीर के अन्दर सोयी हुई ऊर्जा को उत्तेजित कर देता है, जो ऊर्जा नाकाम पड़ी रहती है, उसे कुछ करने की स्थिति में ला देता है। इसी उत्तेजित ऊर्जा केकारण चाय पीने के बाद ही स्फूर्ति

महसूस होने लगती है। इस रूप में चाय की पत्ती चुस्ती-फुर्ती प्रदान करती है। लेकिन चाय की पत्ती, जब पानी खौलता हो तब डाली जाय और डालने के बाद भी इसको खौलाया जाय, तो इसका तापक्रम १००°C से अधिक हो जाता है, जिसके कारण कैफीन नहीं मिल पाता है। इस तापक्रम पर एक दूसरा ही मादक द्रव्य प्राप्त होता है, जिस 'टेनीन' कहते हैं। टेनीन शरीर के लिए बहुत ही हानिकारक है। इसका असर मस्तिष्क के छोटे-छोटे तन्तुओं पर पड़ता है। यह स्नायुतन्त्र को प्रभावित करता है। टेनीन की एक-एक बूंद शरीर में जमा होने पर यह जहर से भी घातक हो सकता है।

इसलिए, चाय पीते हैं, तो पीएँ अवश्य, मगर साबधानी के साथ।

ढूँढ़ता फिरता हूँ मैं 'इकबाल' अपने-आप को—
आप ही गोया मुसाफिर, आप ही मंजिल हूँ मैं।

: इकबाल

बिजली रानी

● रवीन्द्र महासेठ

लेखा प्रभाग

बिजली आती है और कोई आपके 'अस्सलाम वाल-ए-कुम' का जवाब 'वाल-ए-कुम अस्सलाम' से दे'' '' दे'' '' कि बिजली चली जाती है; और कभी–कभी 'लो वोल्टेज' में बड़ी शर्मायी रहती है बिजली—'साफ छिपती भी नहीं, सामनें आती भी नहीं।

बिजली फिर पुरानी स्थिति की ओर जा है। छात्र कल रहो की परीक्षा की तैयारी कर रहे होते हैं कि बिजली गुल, शिक्षक कल की रुटीन देख रहे होते हैं कि बिजली गुल, अधिकारी एवं कर्मचारी संचिकाओं का निष्पादन कर रहे होते हैं कि बिजली गुल, सम्वाददाता सम्वाद तैयार कर रहे होते हैं कि बिजली गुल, दूकानों पर ग्राहकों के आने का समय होता है कि बिजली गुल, टंकी चल रही होती है कि बिजली गुल, गर्मी वाली रात में नींद आ ही रही होती है कि बिजली गुल, पम्पिंग सेट चल रहे होते हैं कि बिजली गुल, टी० वी० पर केवल वयस्कों वाली मिड-नाइट फिल्म बच्चे देख रहे होते हैं–'एक बार फिर', कि बिजली गुल; और हम अभी बिजली की रोशनी में बिजली पर ही लिख रहे थे कि बिजली गुल ! बिजली आती है और आपके 'नमस्कार' का जबाब कोई 'नमस्कार' से दे दे –कि बिजली फिर गुल !

कहा जाता है कि बिजली की स्थिति पर अब कुछ लिखना बेवकूफी है, क्योंकि नतीजा वही निकलता है– ढाक के तीन पात ! फिर भी हम यह बेवकूफी शान से कर रहे हैं, महज इसलिए कि विभाग द्वारा हम बेवकूफ बनाए जा रहे हैं, बनाए जा रहे हैं ; और सोये रहे (नींद में नहीं), तो शायद तब तक बनाये जाते रहेंगे, जब तक इक्कीसवीं सदी में पहुँचा नहीं दिये जाएँगे। सहनशीलता तो हमारी प्रवृत्ति है न ! जरा देखिए तो—बड़े-बड़े कार्यालय, वेतनभोगी पदाधिकारी एवं कर्मचारी, अच्छे-अच्छे यन्त्र– सभी बिहार में उपलब्ध हैं। अनुपलब्ध है तो एक चीज— उपभोक्ताओं को विद्युत की नियमित आपूर्त्ति। वैसे, सरकारी माध्यम से 'हर घर में बिजली' का खूबसूरत नारा लगाया जा रहा है। नारा के अनुसार पोल गड़ जाते हैं, ठीकेदारों एवं अधिकारियों को **लाभांश भी सरलता से मिल जाता है,** परन्तु जब आपूर्त्ति का समय आता है, तो कभी ट्रांसफार्मर जला मिलता है, कभी बिजली की बड़ी मात्रा में चोरी का समाचार मिलता है और कभी मिलता है यह सम्वाद कि अन्न उपजाने के लिए बिजली की आवश्यकता गाँव में है, इसलिए शहर को जरा सन्तोष करना चाहिए ; और सच्चाई यह है कि पूरी बिजली न गाँव को मिल पाती है, न शहर को। जी हाँ, हम सुनहरे कल की ओर

बढ़ रहे हैं।

केवल रोशनी का सवाल रहता तो ढिबरी और लालटेन लेकर भी इक्कीसवीं सदी में जाया जा सकता था, लेकिन बिजली के साथ प्रमुख रूप से लघु उद्योग और जलापूर्ति की समस्याएँ भी तो जुड़ी हुई हैं! लघु उद्योग के लिए भी दो दिनों तक प्रतीक्षा की जा सकती है, लेकिन पानी? पानी रे पानी, तेरा रंग कैसा— कुछ ही घण्टों में हाहाकार मच जाता है! सवाल है, बिजली से जुड़े लोगों का पानी उतर गया है क्या?

राष्ट्र की तीन बड़ी आवश्यकताएँ हैं — शिक्षा, स्वास्थ्य और बिजली। लगता है, तीनों अनियमितता के क्षेत्र में कम्पेटीशन कर रहे हैं। तीनों विभागों से जुड़े सेवक अपने-अपने विभाग को कामधेनु समझ रहे हैं। दुखद पहलू यह है कि हमारे नेता अब समस्याओं पर कम ध्यान देने लगे हैं। मुख्य मंत्री गद्दी पर रहें या उतरें, अधिकांश इसी में लगे रहते हैं। नतीजा सामने है — जन-कल्याण पीछे पड़ जाता है। फिर भी, हम अपने नेताओं से अनुरोध करना चाहेंगे — तत्काल बिजली के मामले में — कि वे सरकार से ऐसी व्यवस्था कराएँ कि बिजली की केन्द्रीयकृत व्यवस्था समाप्त हो। हमारा विश्वास है, और शायद हमारे विश्वास से अधिक लोग सहमत, हों — कि यदि बिजली को विकेन्द्रित कर दिया जाय तो कुछ ही लोग रुष्ट होंगे, लेकिन उपभोक्ताओं को अपेक्षाकृत अधिक लाभ मिल सकेगा। वैसे हमारे मस्तिष्क में फिर वही बात घूम रही है— बिजली पर कुछ लिखना बेवकूफी है।

उजाला तो हुआ कुछ देर को सहने-गुलिस्ताँ में,
बला से बिजलियों ने फूँक डाला आशियाँ मेरा।
: गालिब

दहेज दहेज दहेज दहेज

● निशात

स्नातक प्रतिष्ठा

'दहेज'—यह शब्द घिस-पिट गया है, लेकिन हम इस शब्द को शब्द के रूप में अधिक देखते रहे हैं, समस्या के रूप में कम। सच्चाई तो यह है कि यह समस्या जितनी पुरानी पड़ती जा रही है, उतनी नयी बनती जा रही है।

दहेज एक ऐसा मीठा जहर है जो हमारे समाज को दिन-ब-दिन खोखला बनाये जा रहा है। इसका असर प्रत्यक्षतः तो कम, किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से अत्यन्त ही भयानक है।

आज समाज के हर वर्ग के लोग दहेज जैसी भयानक बीमारी की चपेट में आ गये हैं। यह बीमारी छूट की तरह दिन-ब-दिन फैलती जा रही है। जरा हम इसकी कल्पना करें कि एक बाप अपनी बेटी को पढ़ा-लिखाकर योग्य बनाता है, लेकिन वह कली जब फूल बनकर अपनी खुशबू बिखेरने के लिए तैयार होती है तो समाज के क्रूर-चक्र का शिकार हो जाती है। परिवार के सामने दहेज-रूपी दानव अपना विकराल रूप लेकर खड़ा हो जाता है। आज के युग में, जब हर मानव अपनी रोजी-रोटी की भी समस्या का समाधान नहीं कर पाता उस समय यदि उससे सोने-चाँदी के सिक्कों की फरमाईश की जाय, तो वह कितना मजबूर हो जाता है, कितना बेबस हो जाता है!

दहेज कम देने की वजह से वधू को ससुराल वालों के ताने सुनने पड़ते हैं और मजबूर होकर वह या तो आत्महत्या कर लेती है या ससुराल वालों के अति क्रूर व्यवहार से काल की बलि चढ़ा दी जाती है। यह है आज के समाज का काला करिश्मा!

आज हजारों युवतियाँ दहेज की वेदी पर बलिदान हो रही हैं। यह हमारे लिए काफी शर्म की बात है। जो भारत अपनी शांति और अहिंसा के लिए विश्व में विख्यात है, वहाँ अगर इसी तरह हिंसा और क्रूरता का नग्न नृत्य होता रहे, तो वह दिन दूर नहीं जब हम अपना अस्तित्व गँवा बैठेंगे। स्वतन्त्र भारत के जिस सुनहले भविष्य का सपना नेहरू, गाँधी, सरदार पटेल, सुभाष चन्द्र बोस आदि नेताओं ने देखा था, वह सपना सपना ही रह जाएगा। ऐसा करके क्या हम उनके बलिदान की तौहीन नहीं करेंगे?

संविधान में १९६१ से ही दहेज लेना और देना एक सामाजिक अपराध माना गया है, किन्तु यह सब कानून की मोटी पुस्तकों तक ही सीमित है। आज तक इसे खत्म करने के हर सम्भव प्रयास विफल रहे हैं। कारण है लोगों की

अनायास धन-प्राप्ति की लिप्सा। लोगों के मनोमस्तिष्क में स्वार्थ और खुदगर्जी इस तरह बैठ गई है कि वे मनुष्यता और परोपकार की बातें सुनना भी गवारा नहीं करते। कानून में तो इसके दोषी व्यक्ति को कड़ी-से कड़ी सजा देने का प्रावधान है, किन्तु कानून मजबूर है क्योंकि आज इसे जरुरत है हमारे सहयोग की। आज आवश्यकता है एक सामाजिक जेहाद की, जिसमें देश की युवा पीढ़ी यह योगदान दे कि हमें दहेज की प्रचंड अग्नि में जलते हुए उन अनगिनत परिवारों को भस्मीभूत होने से बचाना होगा। साथ ही आज के युवा यह सोच कर शादी करें कि हमें लड़की से शादी करनी है, न कि दौलत से।

अब निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि दहेज की कुप्रथा पर कानून रोक नहीं लगा सकता है, बल्कि इसके लिए जरुरत है एक सामाजिक इंकलाब की।

नारी सब कुछ कर सकती है लेकिन अपनी इच्छा के विरुद्ध प्रेम नहीं कर सकती।

: सुदर्शन

संगीत

● नमिता द्वितीय वर्ष कला

गायन, वादन एवं नृत्य—तीनों कलाओं का संगम संगीत को पूर्णता प्रदान करता है और यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि संगीत न केवल हमारे पीड़ित मस्तिष्क को शान्ति प्रदान करता है, वरन् जीवन इस या उस रुप में संगीत के सहारे ही चल रहा है।

सचमुच, जन्म से लेकर प्रयाण तक अनेक विसंगतियाँ झेलनी पड़ती हैं। प्रकृति की हर चीज नित विभिन्नताओं को झलती हुई नियति को प्राप्त होती है किन्तु, मनुष्य इस शाश्वत यात्रा के दौरान अति विचलित हो जाता है। शायद उसे डर होता है कि सामयिक विदीर्णता कहीं उसमें सड़ान्ध न पैदा कर दे।

प्राचीन काल में ऋषियों ने मानव-मन की इस अशान्ति को एक गम्भीर समस्या मान इस प्रवृत्ति से दूर रहने के लिए अनेक उपाय सुझाये। संगीत उन्हीं में से एक है। वस्तुतः संगीत मन को एकाग्र करने का एक अत्यन्त ही प्रभावशाली माध्यम है। वैसे, 'संगीत' शब्द अपने-आप में व्यापक अर्थ रखता है। 'संगीत रत्नाकर' नामक ग्रन्थ में इसके क्षेत्र की चर्चा करते हुए कहा गया है—

गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीत मुच्यते।
नृत्यं वाद्यानुयं प्रोक्तं वाद्यं गीतानुवृत्ति च॥

अर्थात् संगीत गायन, वादन तथा नृत्य—तीनों ही कलाओं का सम्मिश्रित स्वरुप है। ये तीनों कलाएँ आपस में क्रमागत रुप से जुड़कर संगीत में निहित रहती हैं। नृत्य वादन से जुड़ा रहता है और वादन गायन से। वैसे, अधिकांश लोग संगीत से केवल गायन और वादन का ही अर्थ लगाते हैं, किन्तु यह यथार्थ नहीं है।

भारतीय संगीत को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—एक, सुगम संगीत तथा दूसरा, शास्त्रीय संगीत। वर्त्तमान के सन्दर्भ में सुगम संगीत का क्षेत्र काफी विस्तीर्ण हो गया है। चूँकि इस प्रकार के संगीत में क्लिष्टता तथा प्रवाहहीनता नहीं होती है, इसलिए जन-साधारण इसे अधिक अपनाते हैं। संगीत की इस शैली में भजन, गीत, आल्हा, चक्की के गीत, प्रान्तीय लोकगीत तथा उत्सव-विशेष पर गाये हुए गीत आते हैं। सुगम संगीत की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें स्वरबद्धता, लयात्मकता तथा काव्यगत मौलिकता साथ-साथ निहित होती है। फिल्मी गीत भी इसी का उदाहरण है।

शास्त्रीय संगीत अपने शास्त्र के नियमानुसार ही चलता है। इसके लिए स्वर, ताल, लय-सभी को नियमों में बाँधकर आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। समयबद्धता इसकी सबसे बड़ी विशेषता है अर्थात् इसकी राग-रागिनियों के गाने का एक निश्चित समय होता है। इन कारणों से इसमें क्लिष्टता बनी रहती है, फलस्वरुप जन साधारण आसानीपूर्वक इसे नहीं

अपनाते हैं । शास्त्रीय संगीत सैद्धान्तिक व व्यावहारिक दो उपभागों में विभाजित है ।

यद्यपि आज शास्त्रीय संगीत की उपेक्षा समाज के सभी वर्गों के द्वारा की जा रही है, परन्तु अवरोधात्मक प्रवृत्तियों को झेलकर भी इसे देश में ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी व्यापक सफलता मिली है । संगीत के सन्दर्भ में एक प्रसिद्ध विद्वान का कहना है—संगीत को अ तरात्मा के उत्थान तथा उसे आनन्दमय स्वरुप प्रदान करने के उद्देश्य से अभिरंजित होना चाहिए । स्वर्गीय रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा है संगीत सौन्दर्य की साकार तथा सजीव अभिव्यक्ति है ।

वैसे, संगीत चाहे सुगम हो अथवा शास्त्रीय, दोनों ही में हमारी आत्मा रम जाती है । संगीत की गोद में हमारी भावनाएँ स्नेहसिक्तता महसूस करती हैं । इसकी सम्पूर्णता में मानवीय चेतना और 'स्व' का दर्शन होता है । यही कारण है कि संगीत धर्म, राष्ट्र और काल की सीमा से परे, विश्वव्यापी तथा कालजयी है ।

शरीर बीणा है और आनन्द संगीत । यह जरूरी है कि यंत्र दुरुस्त रहे ।
: बीचर

धर्म की दार्शनिक व्याख्या

● प्रो० ब्रज किशोर भण्डारी
दर्शनशास्त्र विभाग

सामान्यतः जिसे धारण किया जाय, उसे धर्म कहते हैं, परन्तु इसकी व्याख्या कई रूपों में की गयी है।

धर्म शब्द की उत्पत्ति 'धृ' धातु से हुई है, जिसका अर्थ होता है धारण करना। अतः जिसको धारण किया जाय, अथवा अंगीकार किया जाय, वही धर्म है। इस शब्द का व्यवहार उन नीतिनियमों के लिए किया गया है, जिसकी रचना समाज-धारण के लिए आध्यात्मिक दृष्टि से की गयी है। महाभारत में भी कहा गया है— "धारणाद् धर्म इत्याहुः धर्मो धारयति प्रजा" अर्थात् जिससे समस्त प्रजाओं का धारण होता है अथवा जो विश्व के समस्त प्राणियों के कल्याण का कारण है, वही धर्म है। इस प्रकार हम पाते हैं, कि धर्म से जहाँ वस्तु के अस्तित्व का निर्धारण होता है वहीं इसे दो दृष्टिकोणों से समझा जा सकता है जिनमें से प्रथम को वैयक्तिक पक्ष तथा दूसरे को सामाजिक पक्ष कहते हैं।

वैयक्तिक पक्ष के अनुसार धर्म वह है जिसमें मनुष्य असीम से अपने सम्बन्धों को इसलिए स्थापित करता है कि उसे दृढ़ विश्वास रहता है कि एक अनंत शक्ति उसके पक्ष में है, जो शक्ति दूसरी निम्नतर शक्तियों से उसका बचाव करेगी फलस्वरूप वह निम्नतर शक्ति उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकेगी, ऐसा मानना प्रसिद्ध दार्शनिक सांतायन का है। इसी भाव की पुष्टि दुरखाइम ने करते हुए कहा है कि "धर्म पवित्र पदार्थों से सम्बन्धित विश्वासों एवं प्रक्रियाओं की एकताबद्ध व्यवस्था है,' जबकि टैलर धर्म को सिर्फ आध्यात्मिक सत्ताओं में विश्वास मानते हैं। हावेल के अनुसार धर्म अलौकिक शक्ति में विश्वास पर आधारित है, जो 'आत्मवाद' एवं 'माना' को अपने में सम्मिलित करता है। माना' का विवेचन करते हुए दुरखाइम ने बताया है कि यह एक ऐसा मौलिक तत्व है, जिसमें से वे विविध सत्ताएँ निर्मित होती आयी हैं जिनकी पूजा विभिन्न धर्मों के विभिन्न कालों में इसलिए होती रही है कि धर्म इसे व्यक्तित्व-सम्पन्न बनाकर धारण करता रहा है। धर्म की व्याख्या करते हुए प्रो० ह्वाइटहेड ने कहा है कि यह एक ऐसी वस्तु की दृष्टि है जो जीवन के इस ओर है, पार्श्व में है, आत्मा में है एवं आवश्यक वस्तुओं के प्रत्येक प्रवाह में है। यह एक ऐसा सत्य है जो ज्ञात होने के बावजूद ज्ञात होने की प्रतीक्षा में है और महानतम वर्त्तमान सत्य होने पर भी एक दूरातीत सम्भावना है जिसके अनुसंधान की गाड़ी सफलता की अपेक्षा असफलता की ओर ही विशेष रूप से अग्रसर

होती रही है। डा० राधाकृष्णन के अनुसार धर्म का लक्ष्य मनुष्य का निर्माण करने वाली विभिन्न शक्तियों में समन्वय लाना है, जो मानव के अन्तरंग को शुद्ध करने के साथ-साथ उसके कर्म को भी निर्दोष करने का काम करती हैं। इसकी व्याख्या करते हुए डा० देवराज ने कहा है कि धार्मिक तथा आध्यात्मिक अनुभूति मूलत: एक रहस्यपूर्ण परिणति, लक्ष्य अथवा उपस्थिति (सत्ता) की प्रतीति है, जो जीवन के समस्त मूल्यों का आधार समझी जाती है। अत: धार्मिक जीवन वह है जो उक्त लक्ष्य तथा सत्ता की आपेक्षता में लिया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि वैयक्तिक दृष्टिकोण से व्यक्ति द्वारा परम शक्ति से सम्बन्ध स्थापित करना ही धर्म है।

सामाजिक पक्ष के रुप में समाज में पाये जाने वाली सहानुभूति, सहकारिता एवं दया ही धर्म है। 'याज्ञवल्क्य स्मृति' में जो धर्म के भेद छ: (१) वर्ण धर्म (२) आश्रम धर्म (३) वर्णाश्रम धर्म (४) गुण धर्म (५) निमित्त धर्म (६) साधारण धर्म वर्णित हैं, वे मुख्यतया इसके सामाजिक पक्ष की ओर ही संकेत करते हैं, जबकि मनु ने इसके चार लक्षणों (१) वेद (२) स्मृति (३) सदाचार (४) आत्महित को माना है। इन उल्लिखित भेदों और लक्षणों के मर्म को यदि हम देखें तो पायेंगे कि समाज और व्यक्ति को धारण करने वाली शक्ति ही धर्म हैं, जिस शक्ति को धारण करना व्यक्ति एवं समाज दोनों के लिए आवश्यक ही नहीं, अपरिहार्य भी है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि धर्म के स्वरुप को स्थिर करना एक टेढ़ी खीर है। सम्भवत: इसीलिए कहा गया है कि :—

श्रुतिविभिन्ना स्मृतयो विभिन्ना,
नैको मुनिर्यस्य वच: प्रमाणम्।
धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायां
महाजनो येन गत: स पन्था॥

[अर्थात् धर्म के प्रतिपाद में श्रुतियों में जिस प्रकार विरोध पाया जाता है, उसी प्रकार स्मृति भी एक दूसरे से भिन्न है। कोई एक मुनि ऐसा नहीं है जिसके वचन को प्रमाण के रुप में माना जाय। इसीलिए यही कहना पड़ता है कि धर्म का तत्व गुफा में छिपा हुआ है अर्थात् रहस्यात्मक है। अतएव हमलोगों को उसी मार्ग का अनुसरण करना चाहिए, जिस पर महापुरुष गये हैं]

धर्म विषयक विवेचन की दुरुहता का एक मुख्य कारण यह रहा है कि 'धर्म' शब्द का प्रयोग न केवल व्यवहार में, अपितु साहित्यिक परम्परा में भी विभिन्न अर्थों में होता रहा है। प्राय: 'धर्म' और 'रिलीजन' को समानार्थक समझ लिया जाता है, किन्तु यह धारणा ठीक नहीं है। रिलीजन' शब्द का मौलिक अभिप्राय कर्त्तव्य-भावना है, ऐसा मानना डा० भगवान दास का है, क्योंकि, इनके अनुसार, 'धर्म वह है जो मनुष्य को प्रेम, सहानुभूति, दया एवं कर्त्तव्य के द्वारा एक दूसरे से बाँधे रहता है तथा इस सभी को ईश्वर के साथ बाँधे रहता है। इस अर्थ में वह धर्म की नैतिक भावना के समीप पहुँच जाता है जबकि सामान्य व्यवहार में 'धर्म' शब्द की तरह ही

इसका प्रयोग विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के लिए होता आया है जिसका कारण विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों पर विभिन्न संस्कृतियों की छाप को माना जा सकता है। उदाहरणस्वरुप, मुसलमानों के ईश्वर तथा वैष्णवों के ईश्वर में जहाँ बहुत अन्तर है, वहीं बौद्धों के निर्वाण तथा ईसाई और मुसलमान के स्वर्ग में भी कोई समानता नहीं है। यदि हम आदिम जातियों और आज की सभ्य जातियों की कल्पनाओं पर विचार करें, तो यह भेद और अधिक स्पष्ट दीख पड़ता है। किन्तु इन सारी विभिन्नताओं के बावजूद सभी धर्म आध्यात्मिक मूल्य को अवश्य स्वीकार करते हैं क्योंकि यही परम सत्य है तथा जगत का आधार है।

यह चरम सत्य, जो जगत का आधार है, उसकी चर्चा भारतीय धर्मग्रन्थों (जैसे वेद उपनिषद) तथा भारतीय दर्शन (जैसे—वैशेषिक, योग, मीमांसा) में हुई है यह देखने योग्य है।

ऋग्वेद में 'धर्म' शब्द का प्रयोग कई स्थलों पर विभिन्न रूप से किया गया है। इसी ग्रन्थ में 'ऋत' और 'सत्य' की अवधारणाओं का विवेचन करते हुए कहा गया है कि दोनों सिद्धान्त का अभिप्राय विश्व-प्रपंच में व्याप्त उसके नैतिक आधार से है जिसके दो सिरे या रुप हैं। वाह्य जगत की सारी प्रक्रियाएँ जिन विभिन्न प्राकृतिक नियमों के अधीन चलती हैं उन्हें ऋत' कहा जाता है। इसी प्रकार मनुष्य के जीवन के प्रेरक जो भी नैतिक आदर्श हैं, उनका आधार सत्य' है। वैदिक आदर्श ऋत' और 'सत्य' को एक ही भौतिक तथ्य के दो रुप मानता है। अतएव यही कहना चाहिए कि एक ओर वाह्य जगत के पदार्थों के व्यक्तित्व के सम्पादक स्वरुपों को और दूसरी ओर मनुष्य के आंतरिक जगत के नैतिक आदर्शों को, जो उसके वास्तविक स्वरुप से भिन्न होते हैं, धर्म कहा जा सकता है। इन दोनों अर्थों का पर्यवसान वस्तुतः सत्य में होता है। जबकि उपनिषद में धर्म शब्द का प्रयोग सामान्य रूप से नैतिक आदर्श अथवा सदाचार के अर्थ में हुआ है। जैसे तैत्तिरीय उपनिषद में कहा गया है कि 'सत्यवद, धर्म चर' अर्थात् सत्य बोलो, धार्मिक आचरण करो। फिर छान्दोग्य उपनिषद में कहा गया है कि 'वाग्धर्ममधर्म विज्ञापयति' अर्थात् वाणी ही धर्म-अधर्म के स्वरुप को बतलाती है। लेकिन वृहदारण्यक उपनिषद में धर्म शब्द का प्रयोग आध्यात्मिक, नैतिक तथा भौतिक जगत के संचालक मौलिक तत्व के अर्थ में हुआ है। जैसे :—

यह धर्म सब भूतों का मधु हैं और सब वस्तुएँ इस धर्म की मधु हैं, और जो इस धर्म में प्रकाशमय अमृतमय पुरुष है, और जो यह आध्यात्म धर्म-सम्बन्धी प्रकाशमय अमृतमय पुरुष है, वह आत्मा ही है। यह अमृत है, ब्रह्म है, यह सत्य है।

यह सत्य सब भूतों का मधु है, और समस्त भूत इस सत्य के मधु हैं। यह जो इस सत्य में प्रकाशमय अमृतमय पुरुष है, और जो यह

आध्यात्म सत्य - सम्बन्धी प्रकाशमय पुरुष है, वह यह आत्मा ही है। यह अमृत है, यह ब्रह्म है, यह सत्य है।

उक्त प्रतिपादन में धर्म और सत्य को एकरूप माना गया है और कहा गया है यह जो धर्म है, वह सत्य ही है, क्योंकि सत्य के समान धर्म भी समस्त बाह्य और आंतरिक पदार्थों के स्वरूप का सम्पादन करने के साथ-साथ अपने स्वरूप में स्थिति का नियामक भी है। यही कारण है कि सत्य बोलने वाले के प्रति कहा जाता है कि धर्म कह रहा है और धर्म कहनेवाले के प्रति कहा जाता है कि सत्य कह रहा है। इस प्रकार स्पष्ट है कि धर्म एवं सत्य में कोई भेद नहीं है।

वैशेषिक दर्शन के अनुसार 'धर्म वह पदार्थ है जिससे सांसारिक जीवन में अभ्युदय और जीवन के परमलक्ष्य निःश्रेयस दोनों की सिद्धि होती है। इस दर्शन के अनुसार वेद जैसे धार्मिक ग्रन्थों का प्रामाण्य इसलिए है कि उक्त अर्थों में वे धर्म का प्रतिपादन करते हैं, जबकि मीमांसा दर्शन के अनुसार ब्राह्मण-ग्रन्थों में विधि-वाक्यों द्वारा जिस अर्थ का प्रतिपादन किया गया है वही धर्म है। जैसे, जिसको स्वर्ग की इच्छा है उसे अग्निहोत्र हवन करना चाहिए, जो यह दर्शाता है कि इसके अनुसार कर्मकाण्ड ही धर्म है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि धर्म शब्द के अर्थ का विकास दो धाराओं में हुआ है। पहली धारानुसार धर्म-शब्द का अभिप्राय तद्-पदार्थों के स्वभाव, स्वरूप अथवा स्वरूपाधायक तत्वों से है। यही कारण है कि नारायणोपनिषद में कहा गया है—"धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा" अर्थात् धर्म ही समस्त जगत की स्थिति का आधार है। इस प्रकार मूल में 'ऋत' और 'सत्य' दोनों के अभिप्राय से धर्म शब्द का प्रयोग हुआ है और 'सत्य' शब्द के व्यापक अर्थ को लेकर सत्य और धर्म समानार्थक हो जाते हैं। इसलिए कहा गया है—'सत्यमेव देवा' अर्थात् देवता सत्य को जाननेवाले होते हैं। 'देवा ऋतज्ञा' अर्थात् देवता ऋत को जानने वाले होते हैं।

धर्म शब्द के अर्थ-विकास की दूसरी धारा में जैसा कि हम कह चुके हैं आचरणपरक एवं कर्मकाण्डात्मक आचरणपरक हो जाता है। इस दृष्टि से मनु द्वारा प्रस्तुत (धृतिः क्षमादमोऽस्तेय शौचमिन्द्रिय निग्रहः धीर्विद्या सत्यम् क्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्) जो धर्म के दस लक्षण हैं तथा मीमांसा के अर्थ में शास्त्र - प्रतिपादित जो कर्मकाण्डात्मक आचरण हैं, दोनों को धर्म नाम से पुकारा जाता है। यहाँ यह बात ध्यान रखने की है कि आचरणात्मक धर्म का मूल स्रोत दार्शनिक धर्म में ही होता है तथा उसे होना भी चाहिए।

दार्शनिक धर्म से हमारा अभिप्राय आत्मा की उस आदर्श स्थिति से है, जिसमें वह बाह्य और आभ्यान्तर जगत के कार्यकर नियमों की 'ऋत' और 'सत्य' की मौलिक एकता का साक्षात अनुभव करता हुआ उनको अपने वास्तविक स्वरूप का प्रकाश समझता है। इस स्थिति का विवेचन योगदर्शन में इस प्रकार किया गया है—

विशुद्ध सात्विक अवस्था में जिसका चित्त समाहित हो चुका है, उसकी प्रज्ञा को 'ऋतम्भरा' कहा जाता है, क्योंकि वह सत्य को ही धारण करती है और उसमें बाह्य तथा अभ्यान्तर पदार्थों के प्रति विपर्यास या मिथ्याज्ञान की गंध भी नहीं होती। इस अर्थ में धर्म स्वभावतः साक्षात्कार की वस्तु है, जो मौलिक अर्थों में सत्य से अभिन्न होता है।

इसी दार्शनिक धर्म के दृष्टिकोण को मद्दे-नजर रखते हुए मनुष्य के जीवन में पाये जाने वाली अपूर्णता रिक्तता, चारित्रिक वैषम्य, आध्यात्मिक अशांति और अवसाद को दूर कर पूर्ण सत्य आप्रकामता, अमृतत्व तथा परम शांति की अनुभूति प्राप्त की जा सकती है। अशेष में धर्म के औचित्य और अनौचित्य का निर्णय अन्ततोगत्वा दार्शनिक दृष्टिकोण से ही हो सकता है। यही कारण है कि धार्मिक संप्रदाय के प्रवर्त्तक वे ही हुए हैं जिन्होंने स्वयं अपने में धर्म का साक्षात्कार किया था। इस तथ्य को समझे बिना धर्म के नाम पर जो दंभ, पाखंड, प्रवंचना, पारस्परिक विरोध, संघर्ष और अशांति का साम्राज्य, हम संसार में नित्य प्रति देखते हैं, उसे नहीं समझ सकते, तथा न उसका उचित समाधान ही ढूँढ़ सकते हैं। अतएव जरुरत है इस तथ्य को समझने की तथा उसके अनुरुप आचरण करने की।

रोटी के ब्रह्म को पहचानने के बाद ज्ञान के ब्रह्म से साक्षात्कार अधिक सरल हो जाता है।

: राधाकृष्णन्

अर्थ

● ज्योति कुमारी — संगीत प्रतिष्ठा

मैं यह नहीं चाहती
कि
घोषणा
आश्वासन
विश्वास
कृतसंकल्प
दृढ़संकल्प
कटिबद्ध
वचनबद्ध
सहानुभूतिपूर्वक विचार
समुचित कार्रवाई
आदि शब्दों के प्रयोग पर
रोक लग जाय
मैं तो
बस यह चाहती हूँ
कि लोग—
हर क्षेत्र के लोग
नहीं जाने दें
इन शब्दों को
व्यर्थ—
बस
समझ लें
इनके अर्थ

अनर्थ

● मालिनी कुमारी — स्नातक प्रथम खण्ड प्रतिष्ठा

मेरी फूल - सी जिन्दगी
काँटों में खो गई है
"होने" का एहसास
अब रेत बन गया है
अरमान
धुआँ ने लगा है/ श्मशान-सा
अब/ मेरे चेहरे पर
रिसता हुआ जख्म
अस्तित्व में है
अन्धी हवाएँ गुजरती हैं
बार-बार
किन्तु
दर्द के निशान
ताजे हैं
मेरे सीने पर
मैं
दर्द को पीकर
मरी हुई-सी जी रही हूँ
असल में,
आज मैंने देख लिया है
दहेज नहीं लानेवाली वधू का
जला हुआ/जलाया हुआ
वीभत्स चेहरा

विद्या

● अनिता सिंह — प्रथम वर्ष कला

एक व्यक्ति रेगिस्तान से होकर गुजर रहा था। रास्ते में उसे एक आवाज सुनाई पड़ी— "यहाँ से कंकड़ उठा लो ! कल तुम्हें हर्ष और विषाद की प्राप्ति एक साथ होगी।"

उस व्यक्ति ने झुक कर कुछ कंकड़ उठाये और अपनी जेब में डाल लिये।

दूसरे दिन सवेरे उठकर जब उसने अपनी जेब टटोली, तो कंकड़ों की जगह उसे हीरे-मोती मिले।

इस प्रकार उसे यह सोंचकर हर्ष हुआ कि 'अच्छा हुआ कि मैंने कुछ कंकड़ उठा लिए थे।' साथ ही उसे यह सोंचकर विषाद हुआ कि मैंने और कंकड़ क्यों नहीं उठाये !

विद्या भी कुछ ऐसी ही चीज है।

हँसगुल्ले

● स्नेहलता — प्रथम वर्ष विज्ञान　　पल्लवी — प्रथम वर्ष विज्ञान

● एक पत्रिका में पाठक के सर्वश्रेष्ठ प्रश्न के पाठक को पुरस्कृत करने का प्रावधान था। जब कई बार प्रश्न भेजने के बाद भी एक पाठक का प्रश्न पुरस्कृत नहीं हुआ, तो उसने झुँझलाकर सम्पादक से प्रश्न किया—'इस बार का पुरस्कार आप किस मूर्ख को देने जा रहे हैं ?' सम्पादक का उत्तर था—'आपको !'

● सच्ची घटना है। हमारे महिला कॉलेज के समारोह में उद्घोषक ने श्रोताओंसे कहा—'अब हमारे मित्र विश्वासजी आप लोगों से दो शब्द कहेंगे।' और विश्वासजी ने माइक पर आकर कहा—'जय हिन्द !'

● शिक्षक—'मान लो कि मेरे पास एक रुपया का डाक टिकट है जबकि लिफाफा पर चिपकाना है मात्र साठ पैसे का टिकट, तो क्या किया जाय ?' गणित का छात्र—'सर, यह कौन-सी बड़ी बात है ! एक रुपये का टिकट चिपका कर ४० पैसे का दूसरा टिकट सामने चिपका दें और दोनों के बीच घटाव का चिह्न (–) दे दें।'

● एक नेता दूसरे नेता से—'अरे, तुम्हारा लड़का फेल हो गया है, तुम मिठाई बाँट रहे हो ?'

दूसरा नेता—'अरे यार, पास-फेल क्या मायने रखता है ! बहुमत तो मेरे बच्चे के साथ ही है न— सौ में पैंसठ लड़के फेल हैं।'

फिल्मी गीतों में अलंकार-योजना

● अनिला कुमारी

द्वितीय वर्ष कला

काव्य की शोभा बढ़ानेवाले धर्म को अलंकार कहते हैं– 'काव्यशोभाकरान् धर्मानलङ्कारान् प्रचक्षते।' एक हिन्दी कवि ने इसे इस रुप में बताया है—

जिससे कविता - कामिनी की शोभा हो वाह्य।
अलंकार होता वही, सुकविजनों को ग्राह्य ॥

अलंकारों की बड़ी महिमा गायी गयी है। अलंकार-सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्यों—भामह, दण्डी, वामन आदि—में आचार्य भामह का कथन है कि जिस प्रकार सुन्दर होने पर भी रमणी का मुख अलंकार के बिना चमक नहीं पाता है, उसी प्रकार सुन्दर रहने पर भी काव्य में अलंकारों के बिना प्रभा नहीं आ पाती है। अलंकारों के प्रयोग हिन्दी फिल्मी गीतों में भी अनायास या सायास हुए हैं। सीमित स्थान को देखते हुए गीतों में प्रयुक्त कुछ उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं—

अनुप्रास : सागर-सागर मोती मिलते, पर्वत-पर्वत पारस,
तन-मन मेरा भीजे-भीजे, बरसे महुए का रस।

यमक : सजना है मुझे सजना के लिए।

उपमा : चाँदी-जैसा रुप है तेरा, सोने-जैसे बाल।

रुपक : दिल एक मन्दिर है, दिल एक मन्दिर है।

उत्प्रेक्षा : तुम जो मिल गये हो, तो ये लगता है कि जहाँ मिल गया।

अतिशयोक्ति: मैं ने चाँद देखा है।

विरोधाभास : मैं नदिया फिर भी मैं प्यासी, भेद ये गहरा, बात जरा सी।

अनन्वय : तेरी-जैसी कोई नहीं है, तेरी-जैसी तू ही है।

वीप्सा : हाय रे, हाय रे, हाय रे!
जलता है जिया मेरा भींगी-भींगी रातों में।

मानवीकरण: कलियों ने घूँघट खोले, हर फूल पे भँवरा डोले।

उल्लेख : कभी तू छलिया लगता है, कभी दीवाना लगता है,
कभी फंटूश लगता है, कभी आवारा लगता है।

मैथिली प्रभाग

मानव ओ ओकर भाषा

● प्रो० भागेश्वर झा

शक्तिक प्रतीक सर्वशक्तिमान कहबैछ,जकर सफल प्रयास ई प्राकृतिक संरचना अछि। एहि कें एक सृष्टिक रुप प्रदान कैल गेल, जकर प्रमुख उपादेय जीवन्त पदार्थ मानल जाइछ, अपना मध्य सँ सर्वप्रमुख जीव, जे गतिमान अछि,कें अलग कयलक एवं जकरा मे सँ गहाप्रमुख चेतन प्राणी, जकरा मानव नाम सँ जानल जाइछ, जकरा एहि प्रकृतिक विकासक ओ एहि मे विभिन्न तरहक परिवर्तनक प्रतिमूर्ति बुझल जाइछ, तकरे प्रादुर्भाव ओ क्रमिक विकासक आकलन साहित्यक मध्य एक प्रमुख ओ आवश्यक विषय मानल जाइछ। एहि प्रकृति मध्य प्रत्येक जड़ वा चेतन पदार्थक प्रादुर्भावक पाछाँ एक ने एक इतिहास छिपल अछि, तहिना मानवक प्रादुर्भावक ओ ओकर क्रमिक विकासक एक छोट-छीन इतिहास मानल जाइछ। शक्तिक तीन रुप मानल गेल अछि— निर्माण, संरक्षण ओ विनाश। ई तीनू रुप जखन एकठाम जुटि जाइछ तँ 'ॐ'' शब्दक निर्माण होइछ जे सर्वशक्तिमान कहबैछ। एहीक एक रुपक निर्माणक स्वामी ब्रह्मा कहबैछ। हुनके इच्छानुरुप मानवक प्रादुर्भाव एहि प्रकृति मे भेल। प्रादुर्भावक समय मे वाचाशक्ति कें छोड़ि ओकरा मे मानवक सभ गुण विद्यमान छल। वाचाशक्तिक ज्ञानक अभाव मे (मानवकें) प्रादुर्भावक संग-संग घोर कष्टक समागम ओकरा मनोमस्तिष्क मे आबि कऽ अपन स्थान सुरक्षित कऽ लेलक। कें प्रारम्भहि मे ओकरा कष्टक अनुभव भेल तें ओकरा मे ओकर निवारणार्थ प्रयत्न करबाक इच्छा सेहो संगहि जागृत भेल। मानव स्वभाव सँ तखनहिं सँ प्रयत्नशील जीवक श्रेणी मे आबि गेल आ ओ क्रम अनवरत ओकरा जीवन मे चलैत रहैत छैक, जकरे प्रसादात ओ अपना जीवन मे विकास ओ परिवर्तनक क्रम बनौने रहइत अछि। उदाहरणार्थ, मानव अपन अथक प्रयास सँ अपन आवश्यकताक पूर्तिक लेल अपन आवासक निर्माण केलक ओ ओकरा परिवर्तनक आधार पर विकासक क्रम के अक्षुण्ण रखइत एकटा सफल रुप प्रदान कऽ सकल। भाषा-निर्माणक संग संग मनुष्य अपन जीवनक आनो-आनो क्षेत्र मे एक ठोस आधारक निर्माण मे जुटि गेल जे ओकर अपन जीवनक भविष्यक क्षण मे सुख ओ आनन्दक जोगार जुटा सकैक। प्रत्येक मानव कें अपन दैनिक आवश्यकताक पूर्तिक हेतु दोसरक सहायताक अपेक्षा भेलैक, जखन ओकरा मे सर्वप्रथम अपनत्वक भावनाक उदय भेलैक। अही अपनत्वक दोसर नाम प्रेम पड़लैक। प्रेमक प्रचार-प्रसार संगठनक रुप लेलक ओ मानव संगठित होमय लागल, जकर प्रतिफलमे ओ समाजक निर्माण कयलक। समाज ओ संगठित रुप भेल जाहि मे सब मिलिकऽ समुदायक विकासक बात सोचय लागल। एहि विकासक क्रम मे ओ सबसँ पहिने भाषाक विकासक प्रारुप तइयार

करऽ लागल।

प्रत्येक व्यक्ति अपना परिवेशक प्रति क्रियाशील रहइत अछि। व्यक्ति अनन्त अछि तैं परिवेशो अनन्त अछि, फलस्वरुप प्रतिक्रिया सेहो अनन्त होइछ। अनन्त रहलो सँ परिवेश कें सरलता सँ दू भाग मे विभाजित कैल जा सकइछ—प्राकृतिक परिवेश ओ मानवीय परिवेश। मे मानव-समाजक समावेश रहइत अछि। व्यक्तियो चाहे जतेक हो, ओकरो प्रतिक्रिया कें दू भाग मे बाँटल जा सकइत अछि—ज्ञानात्मक ओ भावनात्मक। ज्ञानात्मक प्रतिक्रियाक सम्बन्ध व्यक्तिक ज्ञान-वृत्ति सँ ओ भावात्मक प्रतिक्रियाक भाव-वृत्ति सँ होइछ। अपन ज्ञान-वृत्तिक मदति सँ व्यक्ति अपन-अपन परिवेश कें चिन्हइत अछि। परिवेश चिन्हऽ सँ पहिने ओकरा सुखद ओ दुखद अनुभवक आभास होमय लगइत छक। ई काज व्यक्तिक भाव-वृत्तिक माध्यम सँ होइछ। ई एकदम स्पष्ट अछि जे दुनू प्रतिक्रिया व्यक्ति मे संग-संग होइछ। ओकरा मे विभाजन मात्र स्वरुप-भेदक कारण होइछ। अहि सब प्रतिक्रिया द्वारा व्यक्ति अपना कें परिवेशक अनुकूल वा परिवेश कें अपना अनुकूल बनबइत अछि। एहन देखल ओ अनुभव कैल गेलइक अछि जे व्यक्ति उत्पन्न हुअ सँ पहिने अपन परिवेशक प्रति क्रियाशील भऽ जाइत अछि एवं ओकर जीवन-व्यापार आरम्भ भऽ जाइछ। परिवेश प्राकृतिक हो अथवा मानवीय, प्रतिक्रिया दुनू मे होइछ। व्यक्ति, परिवेश, प्रतिक्रिया—एहि तीनूक संयोग सँ व्यक्तित्वक निर्माण ओ विकास होइत अछि। प्रतिक्रियाक अभिव्यक्ति सेहो विभिन्न तरहक होइछ। किछु अभिव्यक्ति तँ मात्र शरीर-व्यापार द्वारा सम्पन्न होइछ तँ किछु उपादानक सहायता सँ। जेहने प्रतिक्रिया, तेहने ओकर अभिव्यक्तियो ज्ञानात्मक ओ भावात्मक दुनू तरहक भऽ सकइछ। ज्ञानात्मक अभिव्यक्ति सही भेला पर ज्ञान अथवा विज्ञान कहबइत अछि ओ भावात्मक अभिव्यक्ति सुन्दर भेला पर कला ओ साहित्यक संज्ञा प्राप्त करइत अछि। भौतिक उपादानक सहायता सँ निष्पन्न हुअ बला सुन्दर अभिव्यक्ति मे वास्तु, मूर्ति ओ चित्रक गणना भऽ सकइत अछि, ओतहि मात्र शारीरिक व्यापार द्वारा निष्पन्न हुअ बला सुन्दर अभिव्यक्ति मे नृत्य, गीत ओ साहित्यक मुख्य रुप स गणना होइत अछि। अभिव्यक्तिक सर्वप्रमुख माध्यम होइछ भाषा। एहि माध्यमक विशेषताक कारणे एक दिशि जँ विपुल वैज्ञानिक वाङ्मयक सृष्टि भऽ सकइत अछि तँ दोसर दिशि महान साहित्यिक निर्माण भऽ सकइत अछि। परन्तु साहित्यक उद्भव ओ विकास मुख्य रुप सँ भावात्मक प्रतिक्रिये सँ होइत अछि। भावात्मक प्रतिक्रिये ओकर विषय होइछ जे पाठक ओ श्रोता मे मात्र भावात्मक प्रतिक्रिये कें उत्पन्न करइछ।

जँ यदि कोनो ध्वनि अथवा ध्वनिग्रामक पुनः-पुनः आवृत्ति गाना मानल जाए तँ चिड़इ चुनमुनी सेहो नचैत ओ गबइत अछि, जे साहित्य मध्य कखनो नहि आबि सकइत अछि। साहित्य तँ मात्र मनुष्य द्वारा रचल जा सकइत अछि, कियैक तँ साहित्यक रचना भाषाक माध्यम सँ होइछ। भाशाक परिभाषाक संबध मे कहल गेल अछि जे मनुष्य द्वारा जे किछु बाजल जाइत अछि से मुख्य

रुप सँ भाषा कहबइत अछि,परन्तु भाषा-वैज्ञानिक लोकनि एकर खण्डन करइत भाषाक परिभाषा एहि तरहें रखलनि—"ओ शब्द वा शब्द समूह जाहि मे किछु अर्थ हो अथवा जकरा सँ मनुष्यक कोनो तरहक आवश्यकताक पूर्ति हो, से भाषा कहबइत अछि।" ओना तँ वेद-पुराण, जे भाषाक उत्पत्तिक बाद रचल गेल, तकर आयु ज्योतिष गणनाक अनुसार विक्रमी संवतक सौर वर्ष १९९२ क समाप्ति तक एक अरब, पंचानवे करोड़, अठावन लाख, पचासी हजार सत्रह (१.९५.५८.८५.०१७) सौर वर्ष तथा छप्पन(५६) दिन होइत अछि, परन्तु आई सँ पन्द्रह-सोलह (१५.१६) हजार वर्ष पूर्व उत्तर पाषाण युगक आरम्भ भेला पर भाषा विकसित छल। नामक अतिरिक्त क्रियाक प्रयोग सेहो होमय लागल एवं ओकर बाद सर्वनाम विशेषण,क्रिया विशेषण आदि स्वभावत: प्रकट होमय लागल, फल भेल जे समझ ओ सोच विचारक शक्ति सेहो बढ़ब लागल। भाषा आगाँ बढ़ल तँ विचार संग देलक, विचार आगाँ बढ़ल तँ भाषा संग देलक। यैह परस्पर विकासक सहयोग आइयो चलि रहल अछि। भाषाक विकास भेलाक बाद प्राप्त ज्ञान मनुष्यक कंठ-कोष मे सुरक्षित राखल जाए लागल, जाहि सँ भावी पीढ़ी लाभ उठौलक। एहि तरहक ऐतिहासिक परम्परा चलि पड़ल। ई परम्परा छल प्रकृतिक विध्वंसक पक प्रति आतंकक, ओकर रम्य ओ उदार रुपक प्रति स्नेह एवं कृतज्ञताक,वृद्ध कुलनायक सँ भय केँ मायक प्रति स्निग्ध पय: प्रीतिक, स्त्रीक प्रति पुरुषक ओ पुरुषक प्रति स्त्रीक सहज आकर्षणक, संक्रामक रोग आदि सँ बँचबाक लेल बहुत तरहक कल्पित अभिचार क्रियाक ओ शक्ति एवं सफलता प्राप्त करबाक लेल बहुत तरहक विधिनिषधक। एहि तरहक परम्परा केँ आगाँ बढ़यबाक काज ओहि समय मे लययुक्त भाषा-रचनाक माध्यम सँ ठीक ढंग सँ भऽ सकइत छल। गीत ओ पद्य ओहो तरहक रचना अछि। ओहि युगक ओ गीत वा पद्य प्रकृतिक विभिन्न शक्तिक स्तुतिक रुप मे एवं किछु एक जन दोसर जनक संग संग्राम मे प्रदर्शित वीरताक गाथाक रुप मे रहब होयत। कोनो व्यक्तिसमूहक नायक ओहि समय मे वैह भऽ सकइत छल जे सर्वाधिक शारीरिक शक्ति सँ सम्पन्न ओ बुद्धिसँ चतुर होइत छल। एहि सँ ई स्पष्ट अछि जे ओहि समय मे सेहो व्यक्तिगत वीरताक प्रदर्शन पर गाथा रचल जाइत छल। अही गाथा सभ मे सँ आगाँ जा कऽ किछु पर महाकाव्यक रचना भेल होयत: यथा—व्यासक महाभारत, बाल्मीकिक रामायण एवं होमरक इलियाद तथा ओदुस्सेइआक निर्माण भेल। प्राकृतिक शक्ति पर रचल स्तुति सँ स्तोत्र साहित्य ओ वीर नायक पर रचल गाथा सँ आख्यान साहित्यक परम्पराक श्रीगणेश भेल। भाषाक स्वरुपक निर्माण जखन विकासक क्रम मे आयल, तखुनका जे ओकर रूप छल से संस्कृत छल। भाषा ओहो स्वरुप मे अपन विकासक मार्ग पर गतिमान भेल बढऽ लागल। ई प्रकृति परिवर्तनशील अछि, तेँ एकर प्रत्येक उपादेय वस्तु सेहो परिवर्त्तनशील छैक, तँ भाषा कोना एहि सँ हटि कऽ अपन स्वतंत्र अस्तित्व बना सकइत तेँ ओकरो स्वरुप मे अनवरत परिवर्तन होमय लगलैक एवं प्रत्येक समाज मनोनुकूल अपन-अपन पसंदक भाषाक स्वरुपक संरचना करय लागल। ओहो परिवर्तित ओ मनपसंद संरचनाक प्रारुप हिन्दी, मैथिली ओ अन्य क्षेत्रीय भाषा सभ अछि।

पनिभरनी

● प्रो० देवेन्द्र लाल कर्ण मैथिली विभाग

दूनू काँखतऽर दुइटा घैल, नँहगा फाटल, नूआँ मैल,
चेहरा पर नहि कनिओ क्लान्ति, घरमे कलह, ने मोन मे शान्ति।
बारह टाका भेटय सलामा, जन देबए मे नहि बहाना।
साँझ भिनसर ओ आबए सबेरे, सूखल ठोर, मुस्काइत अनेरे।
तेयो ने गिरहथ कहे नीक बात, बाल्टी - घैला दए पाँच-सात,
माँजिकऽ बर्त्तन ला नीक जल, जँ चाहै छेँ अपन भल।
भूखल पेट निकलि गेल पसली, खसले घैल, पचकल तसली।
राति भेल ने घरमे भानस, कानि उठि पड़ल दग्धल मानस।
मालिकक बेटा बाजय बोल—ला घैला ओ बसली नोल!
तइओ नितदिन पानि पियाबे, घर-घर सभ केँ हिया जुराबे।
क्रूर समाज नहि करए विचार, हँसय देखि ओकरा लाचार।
मुदा नीक नहि ई व्यवहार, ओहो मनुख, नहि बाघ - सियार।
करए कते ओ सबहक सेवा, तइयो नहि पाबए किछु मेवा।
ओकरो शीघ्र हेतैक उत्थान, सुनू समाजक लोक महान!

अपन अस्तित्वक हेतु सब केओ जि बैत छी।
अहाँ हमर, हम अहाँक शोणित पिबैत छी॥

: श्रीश

सावधान !

● कुमारी सिम्मी

समाजशास्त्र प्रतिष्ठा

गाछ !
गाछ !!
माटिक रस चूसि
तोँ छितरा गेलह
आ हमरा सभ केँ
हमरो अंश नहि देलह !
अन्हड़ आएल
आ हमरा सूखल बूझि
तोड़ि देलक ।
तो सोँचि रहल छह
जे ठाढ़ि सभ छिड़िआ गेल—
सूखल अछिए,
आर सूखि जाएत
आ जरा देल जाएत ।

हम छिड़िआएल छी अवश्य,
अव्यवस्थित छी अवश्य,
मुदा सुनि लह हौ गाछ—
ई छह तोहर भ्रान्ति ;
तोरा नहि बूझल छह
जे अव्यवस्थे सँ उपजैछ क्रान्ति !
जखन हम सभ रगड़ाएब
तँ चिनगी बनब ;
आ फेर बनब दावानल —
तहूँ नहि बचबह,
जखन सुड्डाह भए जाएत
समस्त जंगल !

सिरीज : अकच्छ छी

अकच्छ छी : १

● रानी कुमारी

स्नातक (प्रथम) कला

अकच्छ छी, अकच्छ छी !

सामानक महँगी सँ,
आलू केर सब्जी सँ,
कओलेजक सरजी सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

राजाक आसन सँ,
लीडर केर भाषण सँ,
डीलर केर राशन सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

पैंट मे जेबी सँ,
नाममे बेबी सँ,
फिल्ममे श्रीदेवी सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

परीक्षामे चीट सँ,
हीरोइनक जीट सँ,
हीरो केर फीट सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

अकच्छ छी, अकच्छ छी !

रति अग्निहोत्री सँ,
मिथुन चक्रवर्ती स,
अमजद केर वर्दी सँ

अकच्छ छी, अकच्छ छी !

पावनिमे होली सँ,
बच्चा केर टोली सँ,
फिल्म महक गोली सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी,

मधबन्निक नाली सँ,
किरकेट केर पाली सँ,
बाजि रहल ताली सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

सरजी केर रेस्ट सँ,
टाइमक इनवेस्ट सँ,
कओलेजक टेस्ट सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी

अकच्छ छी : २

● ग्रो० विनोद कुमार ठाकुर 'विश्वास' हिन्दी विभाग

कओलेजक मारकेट सँ,
गेटक छोटका गेट सँ,
शिक्षक कक्षक ईंट सँ,
लेक्चररक सीट सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

युरिनल कातक काँट सँ,
एस०पी० सर केर डाँट सँ,
पचकल टिनही ग्लास सँ,
अप्पन एक्स्ट्रा क्लास सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

कओलेजक रुटीन सँ,
पुस्तकालयक सीन सँ,
अटेन्डेन्स रजिस्टर सँ,
हिन्दी वाली सिस्टर सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

तिवारीक हरमुनिया सँ,
किरण झाक अमोनियाँ सँ,
पुरबीजीक अलाप सँ,
आर सुभद्रक नाप सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

कर्णजीक स्पीकर सँ,
गयासुदीनक बीकर सँ,
श्री मिथिलेशक लाइट सँ,
आ अमिताभक हाइट सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

दाई सनक फटफटिया सँ,
नन-हिन्दी केर चटिया सँ,
शिशिर कर्ण केर फीचर सँ,
सोशियॉलॉजिक टीचर सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

जन्तुशास्त्र केर बेंग सँ,
भण्डारी सन ढेंग सँ,
शुक्लक हैलमेट टोप सँ,
भागेश्वरजीक ठोप सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

अमरजीक स्टाइल सँ,
विनयजीक स्माइल सँ,
देवनाथ केर ठेंका सँ,
आ बिश्वासक ढेंका सँ
अकच्छ छी, अकच्छ छी !

कुर्सी-स्तुति

● अर्चना कुमारी

स्नातक प्रथम खण्ड गृह विज्ञान प्रतिष्ठा

बड़ सुख सार पाओल तुअ सङ्गे
छोड़इत सङ्ग नयन बह गङ्गे
कर जोरि विनमओं कुरसी माता
पुन दरसन होए टूटथ न नाता
एक अपराध छेमब मोर जानी
अइँठल माय बैसि तुअ चानी
कि करब बिजनिस, ठीकेदारी
जनम कृतारथ एककहि पारी
भनइ अर्चना समदओं तोहीं
नेक्स्ट टर्म जनु बिसरब मोही

नेताजीक चिन्ता

● साधना कुमारी झा

स्नातक प्रथम खण्ड प्रतिष्ठा

महल्लाक नेताजी
पड़लाह बेमार।
हुनका चिन्तित देखि पुछलकैन्ह
महल्ले मे रहनिहार
लोकल अखबारक पत्रकार—
'चिन्ता कथीक,
की भेल, सरकार ?'
नेताजी फूटि पड़लाह—
'हमरा अपन नहि,
देशक चिन्ता अछि,
तेँ मुख पर मलिनता अछि।
गाँधीजी नहि रहलाह,
नेहरुजी नहि रहलाह,
लोहियाजी नहि रहलाह,
जय परकासो बाबू नहि रहलाह
आ' देशक दुर्भाग्य ई
जे जौं हमरो हेल्थ गड़बड़ा जाएत,
त' ई देश चरमरा जाएत !'

सीख

● नूतन कुमारी

स्नातक प्रथम खण्ड प्रतिष्ठा

साल भरि गप्पे लड़यलहुँ, अध्ययन बेहाल यौ !
परीक्षा आयल तऽ लागल, आबि गेल जंजाल यौ !

राति-राति भरि पढ़इत-पढ़इत, फूटि गेल लालटेन यौ !
लिखइत-लिखइत परीक्षा मे टूटि गेल दुइ पेन यौ !

मुदा हम नहि पास कयलहुँ, रहि गेलहुँ मन मारि यौ !
भाग्य नहि संग देल, गेलहुँ भाग्य सँ हम हारि यौ !

ठकि देलहुँ गुरु-प्रवर कें, संगे ठकल पितु-मात कें,
मुदा हम छी खुद ठकायल, बुझइत छी एहि बात कें ।

जे हमर सगी रहथि, तिनको इएह भेल हाल यौ—
कोन मुँह लऽ घर जायब,—सभ फुलाओत गाल यौ !

हम तऽ डुबलहुँ, मुदा ई सीख भेटल भाई सँ—
मोन कहियो हटायब नहि पेन सँ कि पढ़ाइ सँ ।

नारी-जीवन

● प्रो॰ रघुनन्दन यादव

मैथिली विभाग

भारतीय संस्कृति अपन फराके विशेषता रखैत अछि जकर निर्माण अध्यात्मक सुदृढ़ भित्ति पर ओहि त्रिकालदर्शी ऋषि-मुनि द्वारा भेल, जे दिव्य-दृष्टि-सम्पन्न, राग-द्वेष-शून्य ओ समदर्शी छलाह। भारतीय धर्म एवं संस्कृति मे आदिकाल सँ पुरुष आओर नारी मानवताक समान अधिकारीक रुप मे मानव - जीवनक समुन्नतिक लेल बस्तुत: एक दोसर कें समान सम्मान पर निर्भर करैत आबि रहल अछि। सभ्यावस्था वा असभ्यावस्था मे नर नारी कें उचित सम्मान देबक, परंच देश, काल ओ परिस्थितिक कारण नारीक स्थिति मे परिवर्तन तs अवश्य होइत रहल। नर-नारिक सृष्टि-भेद वा प्राकृतिक भेद जे अछि से तs रहबे करत। सृष्टिक विधान तs सर्वोपरि अछि। नर वा नारिक व्यक्तिगत आकांक्षा नहिओ चाहला पर निजक प्रभाव सँ रिक्त नहि रहि सकैछ। विश्व-संचालिका अन्तरात्माशक्ति, प्राकृतिक नियम वा ईश्वरीय आदेशक समुचित सम्मान करैत सृष्टिक रहस्यकें उद्घाटित करैत मानव जीवनक श्रेयस्कर कल्याण सम्भव अछि। एकर विपरीत चलला पर नर-नारी अपन सुखक प्रसार नहि कs सकैछ। नारी त्याग आओर तपस्याक जाज्वल्यमान विभूति थिक। नारी-जीबनक मूलमन्त्र थिक—त्याग आओर एहि मन्त्र कें सिद्ध करबाक क्षमता तपस्या सँ प्राप्त छैक। ई कहब कठिन अछि जे नारीक जीवनक कोन काल मे विलासक दर्शन होइछ अगर होइछ सर्वांश मे तपस्याक काल ओ उत्तर जीवन कें त्यागक काल मानल जा सकैछ। सामान्यतः नारीक तीन रुप देखबा मे अबैत अछि – कन्यारुप, भार्यारुप ओ मातृरुप। सामान्यत: कौमार्य काल कें साधनावस्था ओ विवाहित जीवन काल सिद्धावस्था रुप में प्रतिष्ठित अछि। एकर अतिरीक्त नारी जीवन – महाशक्ति, महामाया, महामोहा कें रुप में सेहो जानल जा सकैछ। नारी मे प्रकृतितः नारीत्व वा स्त्रीत्वक दुर्बलता ओ पत्नित्व आओर पतिव्रताक सबलता होइछ। नारी पुत्रीक रुपमे पितृ कुलक कीर्ति कें बढ़बैत नहि अछि अपितु अ तत: पितृ एवं पति कुल कें गौरवान्वित करैत अछि। यथार्थत:, नारी जखन नरक समक्ष नारी-रुप मे अबैछ तs ओ एक आधा अंश कें पूर्णता प्रदान करैछ। नारी अर्धांगिनीक रुपने अजस्त्र सरस सरिता प्रवाहित करैत पति मे अपना कें विलीन कs दैछ। यैह कारण अछि जे नर-नारीक स्नेह शक्ति पावि कठोर पाथरक पहाड़ कें खण्ड-खण्ड कs तोड़ी दैछ, सूर्यक दाहकता कें सहजता सँ पत्नि प्रेमक शीतलताक छांह में सहि लैत अछि। वैह नारी जखन जननीक रुपमे अबैत अछि तs अपन सन्तातिक लेल जीवनक समस्त स्नेह कें स्तनपान करबैत शिशु पर न्योछाव कs दैछ। माता स्वयं भुखल प्यासल रहि अपन सन्तानक

रक्षा करैत अछि। नारी केँ उचित पद प्रतिष्ठा देले पर प्रकृति गतिमान रहि सकैछ। यैह कारण अछि जे भारतीय संस्कृति एवं धर्म मे नारी केँ अधिष्ठात्री बताओल गेल अछि।

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:" नारीक अंग मे देवताक वास होइछ तें जतय नारीक पूजा होइछ, औतय सभ देवता वास करैत छथि। कहल जाइछ - जे दुख मे पड़ल नारीक रक्षा करैत अछि ओकर सभ पापक प्रायश्चित भऽ जाइत छैक वा ओ जीवनक समस्त पुण्यक संचय कऽ लैत अछि। सामान्यतया पुरुष प्रधान भारतीय समाज मे नारी-दुर्बलता, कोमलता, स्नेह-ममता, पुरुषसेवा-परायणताक प्रतिमा, पुरुष संभोग्याक रुपमे परिचित अछि। परच भारतीय मनीषिगण नारी केँ एहि रुपमे नहि देखलन्हि। ओ तऽ नारीक कोमलता ओ मधुरतामे महाशक्तिक प्रकाश देखलन्हि तेँ ओ नारी केँ शक्ति स्वरुपणी कहलन्हि। वस्तुत. वीर्य आओर ऐश्वर्यक सौन्दर्य—माधुर्य रुपमे प्रकाशे नारीत्व थीक। नारीक अंग-प्रत्यंग मे सौन्दर्य आओर माधुर्य, कोमल आओर शान्त गुण-समूहक लीला भऽ रहल अछि। स्नेह आओर ममताक कारण, प्रेम आओर सेवा मे जीवन्तताक दर्शन होइछ। नारी अनन्त शक्तिक आधार अछि तेँ नारी पुरुषके गर्भ मे धारण कऽ पबैछ। नारी पुरुषक जननी थिक। समस्त शक्तिक जन्म स्त्रोत नारी थीक। शक्ति सम्पन्न नारीक जीवन यथार्थ कर्मक्षेत्र मे जे देखना जाइछ ओ आधुक परिपेक्ष्यसँ भिन्न बुझनना जाएछ।

एतावता नारी जीवनक महत्ता सर्वमान्य तऽ अछि परच वर्तमान परिवेश मे किछु भिन्नता आवि गेल अछि। कहल जाइछ नारी जखन उत्सर्ग केँ छोड़ि अर्जन प्रारम्भ करऽ लगैत अछि तऽ ओ अपना जीवन केँ अशान्त बना लैत अछि। नारी रागमयी केन्द्रित बृत्तिक थिकीह। जखन एकक त्याग कऽ अनेक मे अपन सरस हृदय के विभक्त करऽ लगैछ तऽ ओ अपन मूल स्वभावक प्रति विद्रोह करैत अछि परिणामत: ओकर जीवन अशान्त बनि जायत छैक। बर्तमान नारी पाश्चात्य सभ्यताक अन्धानुकरण सँ उत्सर्गक भावकेँ त्यागि अर्जन केँ प्राथमिकता दऽ रहलीह अछि। जाहि सँ अधिकांश नारीक जीवन मे शान्तिक अभाव भऽ गेल अछि जकर प्रभाव प्रकारांतर सँ पुरुष वा सम्पूर्ण समाज पर पड़ि रहल अछि। मानव समाजक बृहद् कल्याण केँ दृष्टिमे राखि मनु महाराजक उपदेश केँ नर-नारी अपना जीवन मे चरितार्थ करथ—

अन्योन्यस्याव्यभिचारो भवेदामरान्तिरक:—
एष धर्म: समासेन ज्ञेय: स्त्रीपुंसयो पर:

अर्थात् नर-नारीक धर्म थिक जे जीवन पर्यन्त धर्म अर्थ, काम आदिमे पृथक नहि होथि तखने नारी जीवन वा पुरुष जीवनक सार्थकता अछि।

संस्कृत प्रभाग

संस्कृतभाषायाः महत्त्वम्

● प्रो० इन्द्रदेव सिंह 'निराला' संस्कृत विभाग

व्याकरणदोषादिरहिता भाषा संस्कृतभाषा इति कथ्यते। सर्वविधदोषशून्यत्वात् इयं संस्कृत-भाषा देववाणीति निगद्यते। अतः सत्यमेवोक्तम् भगवता दण्डिना स्वग्रन्थे काव्यादर्शे—

"संस्कृतं नाम दैवी वागन्वाख्याता महर्षिभिः।"

आदिमहाकाव्यप्रणेता महर्षि वाल्मीकिः संस्कृतभाषायामेव रामायणस्य रचनामकरोत्। व्यासोऽपि विश्वविख्यातं महाभारतग्रन्थं संस्कृतमेव अलिखत् अष्टादशपुराणानां रचना व्यासः संस्कृतभाषायामेव अकरोत्। कालिदास, माघ, भारवि प्रभृतयः महाकवयः सस्कृतभाषायामेव अनेकानि सुन्दराणि काव्यानि अलिखन्। संस्कृतभाषायां लिखितं काव्यानां नाटकानां च माधुर्यं संसार-प्रसिद्धं वर्तते। धन्येयं सुरभारती यया मैक्समूलर, गेटे, मैकडोनल, कीथादयः विदेशीयाः विद्वांसः संस्कृतभाषाया अत्यन्तं प्रभाविताः अभवन्।

संस्कृतभाषायाः महत्त्वम् इदमेव विदितं भवति यतः इयं भाषा प्राचीनकाले सर्वसाधारण-जनानां भाषा आसीत्। अस्य प्रमाणम् इदमस्ति—एकः पटकारः स्वकीयं परिचयं संस्कृते इत्थम् अददात्—

काव्यं करोमि नहि चारुतरं करोमि,
यत्नात् करोमि यदि चारुतरं करोमि।
भूपालमौलिमणिमण्डितपादपीठ,
हे साहसाङ्क! कवयामि वयामि यामि॥

अपरञ्च प्रमाणम्—

पण्डितः—"भूरिभाराक्रान्त बाधति स्कन्ध एष ते।"
काष्ठकारः—"न तथा बाधते राजन् यथा बाधति बाधते।"

: "भोजप्रबन्ध"

अन्यच्च प्रमाणं रामायणे भगवता हनुमता लङ्कायां सीतायाः सन्निधौ उपस्थापितम्—तथाहि—

"यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृताम्
रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति।'

संस्कृतसाहित्यस्य स्वकीयम् विशालं साहित्यं विद्यते। तथा च चत्वारो वेदाः, उपनिषदः, वेदानां षडङ्गानि, षड्दर्शनानि च देवभाषायामेव निबद्धाः सन्ति। संस्कृतस्योपादेयत्वम् सर्वत्र

विद्यते, अर्थशास्त्रम्, गणितशास्त्रम् जातम् संस्कृतादेव समुद्भूतम् अत्र वेदाः प्रमाणम्। वेदास्तु सर्वेषां शास्त्रणां निधयः। तस्य शास्त्रस्य अपौरुषेयत्वम् प्रसाध्यते-सत्यमेवाभिहितम्—

"अनादि निधना नित्यावागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा,
आदौ वेदमयी दिव्या यतः सर्वा प्रवृत्तयः॥"

संस्कृतभाषायाः साहित्यम् अतिसमृद्धम्। विश्वस्य कोऽपि साहित्यः अस्य साहित्यस्य विलक्षणतायाः समानतां नहि कर्तुं शकनोति। उच्चारणदृष्टया आङ्गलभाषायां लिख्यतेऽन्यत पठ्यते चान्यत्। यथा - But बुट लिख्यते पठ्यते च बट। Walk बाल्क लिख्यते पठ्यते च वाक। ईदृशं वर्णवैकल्यं नाम किन्नास्त्युपहासास्पदं। परं संस्कृतभाषायां यल्लिख्यते तदेवोच्चार्यते।

संस्कृतसाहित्येऽस्माकं देशस्य संस्कृतिः सभ्यता, सदाचारः आत्मा च वासं विदधाति। भारतीयानां जीवनं षोड्शसंस्कारान् विहाय अपूर्णमेव भवति ते च षोड्शसंस्काराः गर्भाधानादारभ्य अन्त्येष्टिपर्यन्ताः सन्ति ते च संस्कृतभाषायामेव उपनिबद्धाः सङ्कलिता वा। अतः भारतीयानां जीवनं संस्कृतभाषायामित्थमभिव्याप्तं यत् प्रयत्नेऽपि न दूरी भवितुं प्रभवति। स्वधर्मस्य ज्ञानस्यकृते संस्कृतस्य ज्ञानम् आवश्यकमस्ति। यद्यपि भूमण्डलस्य विभिन्नभाषासु सस्कृतग्रन्थानाम् अनेके अनुवादाः सन्ति तथापि यथा मूलग्रन्थानामध्ययनेनैकस्यापि विषयस्य यथार्थज्ञानं भवति न तथा अनुवादग्रन्थानाम् अध्ययनेन इति सर्वसम्मतः सिद्धान्तः अस्ति। यथार्थज्ञानं तु दुरे तिष्ठतु अनुवादकानां बुद्धिभेदात्, विचारभेदात्, अज्ञानात् पदे-२ भ्रान्तिरेव जायते। अतो यावत् संस्कृताऽध्ययनं न क्रियते तावत् कोऽपि भारतीयः स्वकीयं साहित्यम् इतिहासं वा वास्तविकरूपेण वेदितुं न प्रभवति।

संस्कृतभाषासाहित्यस्य महत्ताप्रदर्शकमनेककारणं विद्यमानमस्ति। संस्कृतभाषासाहित्यमिदम्प्राचीनताव्यापकताधार्मिकदृष्टि-सांस्कृतिकदृष्टि-कलादृष्टिभिः श्रेष्ठतमम्। एतादृक प्राचीन साहित्यं कस्याञ्चिदपि भाषायां न प्राप्यते। पाश्चात्यविदुषां दृष्टया मिश्रदेशस्य साहित्यं सर्वासु भाषासु प्राचीनतमस्ति परन्तु व्यापकरूपेण परीक्ष्य साहित्यविद नाति प्राचीनतमम्प्रतीयते।

संस्कृतभाषा भारतवर्षस्य प्राणभूता भाषा अस्ति। इयं भाषा भारतवर्षम् एकसूत्रे बध्नाति। इय भाषायाः महत्वमपि विलक्षणम्। अतः सर्वे भारतीयाः संस्कृतं पठेयुः।

संस्कृतस्य महत्वं ज्ञात्वैव संस्कृतानुरागिणा पाश्चात्येन विदुषा 'सर विलियम जोन्स महानुभावेन पूर्वमेवोक्तम्:—

"यावद् भारतवर्षंस्याद् यावद् विन्ध्यहिमाचलौ,
यावद् गङ्गा च गोदा च तावदेव हि संस्कृतम्॥"

अँग्रेजी प्रभाग

Afgan Power in Mithila

● Prof. Amitabh K. Jha *Department of A. I. H.*

After the death of Aurangzeb in 1707, the region of Mithila was badly disturbed by the activities of the Afgans. The Afgans had a strong belt of influence in Mithila, particularly in Darbhanga and Bhaura (Madhubani). During the reign of Sher Shah (1540 to 1545 A.D.), Afgans were the undisputed master of North India. But, immediately after the death of Sher Shah in 1545, the various Afgan chiefs frittered away their energy and strength in mutual rivalry and struggle which led to the downfall of the Afgan empire. The strongholds of the Afgans fell into the hands of the Mughals one by one. Finally, they took refuse in Darbhanga and other parts of the district. Since then, the Afgan reballions were a regular feature in Mithila and they often created a difficult situation for the administration. It was the Afgan rising which prompted the Mughal Emperor Akbar to bestow the zamindary of Mithila to Mahesh Thakur, the founder of the Khandavala dynesty.

It was under Akbar that Darbhanga was made the seat of the Imperial Faujdar or the Military governor of Sarkar Tirhut a d it was included in the province of Bihar (Suba Bihar). Law and order could not be effectively maintained and the district was the centre of occasional revolts and disturbances. In 1582 there was again a rebellion, and at the battle of Darbhanga (Nagar-Basti) these Afgan rebels were defeated by Mughal Army with the help of Gopal Thakur, the Khandavala Chief. The Afgan leader, Nur-Muhammad was caught and beheaded. Muhalla Nurganj in Darbhanga town is still commemorated by his name. There is also a large field covered with thousands of Martyre's tombs called "Ganj-i-Shahidans". so, Khandavala

chiefs were able to suppress the reballions of the Afgans in the region and bring them under complete subjugation. Since then the Afgans were employed in the services of Khandavala kings and they settled in Darbhanga, Tarsarai. Bhaura, Pathan-kabai and Malmal in large numbers. Local traditions affirm that the famous Afgan chief, Sardar khan, was in the service of Raghava Singh, the Khandavala king.

In the eighteenth century, the Darbhanga Afgan played a very important part in the history of Bihar. In 1734, Alivardi Khan was appointed Subeder (Dy. Governor of Bihar and his reign was characterized by many momentous developments in Bihar The contemporary work Siyar-ul-Mutakherin say that Alivardi admitted into his service, Abdul Karim Khan, a powerful Afgan chief with fifteen hundred Darbhanga Afgans under his command. A series of small expeditions were undertaken against refractory Zamindars. Abdul Karim defeated the Rajas of Bettiah and Darbhanga, occupied the fort of the former, and brougnt the latter as a prisoner to Patna.

According to Muzaffarnama, the wandering bands of Banjaras frequented the regions of Bhaura (Mithila) and Bettiah. It is also said that Bhaura was their special jagir, with 80000 horses and one lac oxen, on the pretext of buying and selling their animals they created disturbances in the region. Thus with the help of the Darbhanga Afgans and the khandavala chief Raghava Singh, Alivardi Khan succeeded in driving out the Banjaras. It is said that on bearing the name of Abdul Karim Khan, the Banjaras fled to the hills of Nepal Tarai. But after sometime Karim Khan began to make ambitious plans. Contemporary sources say that Alivardi got him murdered through a clever device at Patna. Thus ended the life of the braver soldiers of his age.

However, the Afgans of Darbhanga were the soul of the Nawab's army with whose help he had succeeded not only in suppressing the rebel zamindars of Suba-Bihar but also in establishing his power in his early days. In the meanwhile, revoluti nery changes had taken place in the government of

Bengal. In the ensuing battle of Gharia, April 1740, Sarfaraj Khan was killed and Alivardi became the governor of Bengal, Bihar and Orissa. Alivardi now appointed Nawab Zianuddin Haibat Jung, the father of Siraj-u-daula as Subedar of Bihar. The rebellion of Mustafa Khan Bareen occured at about this time. Disappointed in his hopes and resenting Alivardi's broken promises, he came over to Bihar determined to win it by force.

Nawab Zainuddin Haibatjung was at that time staying in Mahal Bhaura of Sarkar Tirhut. He had been secretly instructed by Alivardi to avoid encounter with Mustafa. But Zainuddin ignored his advice and moved from Bhaura to Patna. Raja Narendra Singh, son of Raghava Singh of Khandavala dynasty, joined him with his forces. Contemporary sources say that Nawab stationed at Bhaura (Madhubani) for more than two years for the management of his Jagir and populate the pargan s in sarkar Tirhut. Thus, it appears that Haibat Jung in his compaign against Mustafa Khan secured the help of Narendra Singh the Khandavala chief of Darbhanga and succeeded in defeating and killing Mustafa Khan.

Mustafa Khan's revolt was followed by the defection of the Darbhanga Afgans, the chief among whom were Shamsher Khan and Sardar Khan. In June 1746, these Afgan generals were dismissed by Alivardi and as such they returned to Darbhanga with their six thousand men. They had been living in retirement at Darbhanga and Bhaura since their disbandment by Alivardi when Haibatjung began to conceive plans of becoming independent, he wrote to the Afgans of Darbhanga inviting them to come to Patna for service. But the Afgans had neither forgotten nor forgiven the raw deal they had received from Alivardi. Haibatjung's invitation to them came as a godsend to fulfil their revenge, consequently Shamsher Khan, Murad Khan, Sardar Khan and Baksi Bahelia left Darbhanga and reached Patna. On the day of interview scheduled in the Chehel Sutun (Hall of Audience), Murad Khan, the nephew of Shamsher Khan of Bhaura, treacherously attacked and killed Nawab Haibat Jung.

The Afgans usurped all powers and Alivardi Khan lost his control over Patna for some months. But the veteran, once again rising to the occasion, marched from Bengal. Near Monghyr, Alivardi defeated Afgan forces and their leaders, Shamsher Khan and Sardar Khan were killed. But he did not ill-treat and misbehave with the women and children of Afgans Sardars. In fact, the Nawab treated them with kindness and due respect making all suitable provisions for their comforts. Some villages were also granted to them in Darbhanga and Bhaura for their maintenance. Thus, the Afgan power in Bihar was crushed and their hope of building an empire was gone for good.

The Glory that was Mithila !

● Ranjana Jha First year Science

Once remarked that one who speaks Greek is that one who speaks Greek in that one who speaks, Greek in front of those who dont know it is as one who speaks it without knowing it, yet we all speak Greek in both the situation and make foels of ourselves without giving an opportunity to the other even to say that all that was spoken was Greek. The case of Mithila, however, is different. It is no Academic in the Greek since the Greek times.

A beautiful language spoken in the ancient kingdom of Mithila which was spoken from north Bihar to other parts of Nepal and modern Janakpur, the city of Mithila was invaded by Aryans who colonised it in the third century B. C., Sita, the daughter of Raja Janak of Ramayana also spoke and wrote in Mithila

Strangely enough Mithila is an area where artists are only women and where every woman is an artist. In these areas painting is not a profession but a prayer. Since every woman paints, every woman in Mithila is an artist. If in Kerala the suggestion of matrimony is given by the girl through a song, in Mithila it is done with a drawing.

The Maithil women make their own colours from vegetables and minerals, prepare their own brushes from cotton and feathers and quills and their own paper from bamboo leaves and papyrus. Saffron is their favourite colour. There used to be a famous tank in Mithila where sloping banks were covered with lilies when the afternoon light drew on the waters the passing breeze tefl its footprints in summer and winter months alike.

The play of sunshine and clouds over the tank was a thing af beauty and a joy for ever.

Maithili is recognised by the Sahitya Akademi for the purpose of annual awards lso. Hence, the glory of Mithila is intact Long live Mithila

RAJNIGANDHA : Let the students publish

● Vanita kumari Degree Part I Hons.

As a college magazine reflects the entire life of the student community and the teacher community as well, every college must have a magazine of its own. Our J. M. D. P. L. Mahila College is the only constituent womens' college of Madhubani district and it publishes its magazine RAJNIGANDHA every year. I have gone through the previous issues of our college magazine and I have found four sections in the same: Hindi, English, Maithili and Urdu Prof Binod Kumar Thakur 'Biswas', Prof Shatrughna Panjiar, Prof Raghunandan Yadav and Prof. Q. M. Javed have been editors of the respective sections.

As a college magazine provides opportunity to develop talents of students, our Principal Dr. R. B. Agrawal should think over it that articles of many students should be published in it. Articles of teachers may be published, but in limited number. Then only it will create a healthy spirit among students, As I think. the magazine should be managed entirely by students and senior teachers of different languages should guiede the students Teachers should encourage more students for active participation in the publication of the college magazine. They should help students to cultivate editorial qualities.

The magazine has great educative value. It prepares and produces poets, writers and editors as well Therefore, every college or institution must have its own magazine,

BLACK HOLE

● Prof. M. k. Jha
Physics Department

Physics is sometimes called an exact Physics.

Science and technology have interacted with society in a life and death way. Our scientific understanding is a central part of our modern culture and civilization. Those who are intellectually alive can not help but strive to obtain this scientific understanding.

A secondary and more commonly expressed reason for the study of Physics is the usefulness an understanding of science has to a person living in this modern technological age.

Almost every edition of the daily newspaper contains articles that can not be fully understood without the knowledge of Physics One wonders whether people who have little understanding of science are capable of understand the scientific incidents and articles in newspapers.

Some may worry that such advanced topic as 'Black Holes' is too difficult to beginning students Students come to college expecting to learn more about exciting things in Physics. I think so-called advanced topic 'Black Holes' is easier for students to grasp than the Newton's laws of motions.

My main purpose in writing this article is an attempt to present the excitement of Physics in the clear way.

According to the prediction of general theory of relativity of Eienstein under reasonably normal circumstances a star could collapse after it has used up its thermo-nuclear fuel and that the collapse could be so extrem that the final result would be a 'Black Hole.'

By black hole, we mean that no light or signals could get very far from the surface of the star. Such a star would suddenly and completely disappear and would never be seen again.

The stars radiate energy. Energy is supplied by conversion of the hydrogen into helium via thermo-nuclear reactions.

When nuclear fuel is exhausted, the star can collapse, further into a white dwarf star or black hole.

Star formation with a mass of cold hydrogen gas shrinking in size due to gravitational attra ction. As the hydrogen atoms fall towards each other they pick-up kinetic enegy or temperature.

As heat via electromagnetic radiation, the collapse continues to a point where a new source of heat takes over, This new source of energy is thermonuclear. This reaction is known as proton-proton cycle. This is the main mechanism to produce energy in the sun or in the star or planets. This reaction is as follows : –

Proton + Proton — Deuterium + Positron + Neutrino

Deuterium + Proton — Helium + Guama Rays.

Helium + Helium — Helium + Proton + Proton

Stars of higher masses have higher temperature and will burn their hydrogen at faster rates. Such stars use up all their hydrogen in less than 10^{10} years which is the age of the universe. When the supply of the hydrogen is exhausted, such a star keeps on radiating and starts to contrast. The radius of star will continue to decrease and there arenother kinds of repulsive force or pressure, the star will keep collapsing. When the radius of the star will reach the limiting value, we can no longer see the star. In this condition the particles emitted by the star will fall back into it. The star would no longer be able to communicate with the outside world.

The photons can tr.vel some distance from the star, but they can not reach infinite distance unless critical radius is smaller than uniform sphere's radius. If a star collapses, no light emitted by it could reach the earth. However, its gravitational field could still be felt. The particles or light could fall in towards the star-hence the name "Black Hole".

Although the 'Hole' itself is black.

FOR GREYING GIRLS

Prof. Neelam Bairoliya Zoology Department

Grey hair is not any personal incidence; rather it has become a common problem.

Delhi scientists have a word of cheer for embarassed young girls with hairs prematurely turned grey.

Researches at the A I I M S, Delhi have raised hopes of turning premature grey hair into black without using hair dye.

Dr J. S. Pasrich of Dermatology department has reported success with his treatment which he has so far tried on 19 girls between 13 to 25 age-group of 12 cases grey to black conversion was remarkable in six girls and partial in ten. There was no effect on three girls.

Dr. Pasricha's remedy for premature grey hair is a daily dose of 200 milligrams of calcium pentothenate, a vitamin which is a constituent of the vitamin B-Complex.

The A I I M S Professor has published the effect of the treatment in the issue of the 'Indian Journal of Dermatology and venereology'

Despite the high dose of calcium pentothenate it was found safe and no side-effects were observed, the paper says.

According to Dr Pasricha, premature greying of hairs is probably due to hereditary factors. In India it is reportedly more common among Punjabi girls. The paper further says that the only way to know if the treatment is effective for an individual is to try the medicinal dose for regular six months and find out "if there is any conversion."

Dr Pasricha's studies havo also exploded the myth that pulling one grey hair will result in more grey hairs. In fact, before starting treatment on few girls, he pulled out all their grey hairs. After treatment, the number of grey hairs was less indicating that the follicles which originally produced grey hairs started to produce black hairs.

Our College

● Archana kumari Degree Part I History Hons.

The college in which I read is situated in the middle of Madhubani town, the district headquarters. It is a constituent unit under L. N. Mithila University.

Building : Though our college has three pucca buildings, but this number is not enough, as the college now has a strength of about two thousand students and about four to twelve classes will have to go in the same period. tudents are in need of a commo n.room. Our teachers also face the difficulty as they do not have their departmental rooms.

Students and teachers : People having interest in education know that the results of the students of our college have been excellent. About a hundred teachers teach twenty five subjects and they make students able to appear at the final examinations. It is the special featu e of our college that our teachers engage extra classes also.

Examinations : Though many a college does not arrange terminal or periodical examinations these days, but our college arranges at least two examinations and students have to appear at such exami ations These examinations make them prepared for the final examination. As the centre of university examinations, this college shows a better performance.

Other activities : Though the students of this college have no time for in-door or out-door games during college hours. but they take part in games and sports organised on the eve of annual function They also participate in sports organised by rhe District Association and win prizes. They take part in debates organised by different societies of the college. Besides, cultural programmes are being organised every year on the eve of Republic Day, Independenee Day and Saraswati Puja. This year they staged an one-act play 'The Tempest' of Shakesperae in English, too.

We students are proud of our college.

Sugar Industry in India

● Prof. L. k. Singh Geography Department

Sugar Industry is purely agricultyre industry of India. This industry depends on Indian farmers. Based on a careful analysis of the agriculture balance sheet of today India can develop strategies for the 1990's and beyond which can help maximise the benifit from the existing agricultur l assets and minimise the threats to sustainable agriculture arising from current day environmental liabilities.

Historical background :—India which is the centre of origin of sacharum species, possesses the most favourable environment for maximum growth and sugar accumulation in the sugar cane crop. During the early p ase of sugar cane development in India, sugarcane was main'y grown in subtropical India. The first sugar factory was established in 1784 in Bengal. The second sugar factory was started in 1791 in Bihar. The sugar industry grew in the gangetic b lt slowly during the first decade of the present century By 1931, there were 29 sugar factories with 1. 2. million hectare under cane, of which 80 percent was in sub-tropical India. The tariff protection after 1932, boosted the white centrifugal sugar industries during the next two decades till 1950, and rapidly later on 1940, 148 sugar factories produced 11. 13 lakh tonnes of sugar and by 1960, the production increased to 22. 84 lakh tonnes from 168 factories. With the introduction of planned development and addition to the irrigation potential available in the country especially in Deccan trap region, the sugar industry expanded further in these areas, mostly co-operative sector. By 1970 the number of factories increased 215. Although

out of this. only 90 were in the tropical region but these accounted for 55% crushing capacity. As of 1988-89, there were 366 factories in operation with an avarage crushing duration of 133 days producing 81. 52 lakh tonnes of sugar.

Role of Sugarcane in Indian economy :— Twentyfive million farmers were estimated to be engaged in the cultivation of sucar cane in about 3.37 million hectares in India. Sugar industry is the largest among the processing industries next only to textile industry with a total number of 366 sugar factories having an installed capacity of sugar to the tune of 80 lakh tonnes per annum. The actual white sugar production was 87.52 lakh tonnes during 1988-89. The sugar industry pays to the sugar cane grower annually arround Rs, 22000 crores by way of cane pricc. The Government of India realises over 2000 million rupees as excise duty from the sugar industry. The state government collects an addiional 1000 million rupees as cane cess/ purchase tax from the factories.

Thus, sugar industry is bound to pay a creative role in the Indian economy in the years to come by offering a stable income to the farmers, by providing employment to the rural masses through sugar complexes, by valuable contribution to excheuer as well as in foreign exchanges.

The eyes believe themselves, the ears believe other, people.
: German proverb.

A FRUITFUL DIALOGUE

● Ranjana kumari Degree Part I Eng. Hons.

Vandana : Well Kalyani ! Are you free this evening ?

Kalyani : Yes Vandana, but why ?

Vandana: I want to go to visit 'Main ne Pyar Kiya.' Will you share me ?

Kalyani : Sorry, dear ! I am averse to this type of films because of their evil effects, particularly upon young minds. 'Mainne pyar kiya,' I have heard, is a film which turns our heads with all sorts of romantic ideas and feelings and renders us misfit and unhappy in the world of reality. Will you like to see such film ?

Vandana : Then let us see a good film. Is there any English picture going on ?

Kalyani : Can't say, but a good Hindi picture is in Neelam Talkies—'Dard Ka Rishta ' Though it is an old one, but it is successful from every view-point.

Vandana: As I remember, the two'S' have shown their best performance in this film and the theme also is impressive.

Kalyani : The two 'S' ! What do you mean ?

Vandana: Oh dear ! The first'S' stands for Sunil Dutta and the second for Smita Patil. Isn't so !

Kalyani : Right you are. Now, let us start.

A Song for Hypocricy

● Prof. S Panjiar English Department

Let me sing of Hypocricy !
To be a Hypocrite is all I dream,
To fleece others is my single theme.
I have a knack for looting, though.
But I never mind stooping low
(Because there is here a Natural call
'He that's mean, needs fear no fall'.)
My listed ancestors ruled the roost,
From them I derive eternal boost.
A little in me to faint meaning makes pretence,
But I do never deviate into sense.
It irks me to cultivate a good sense
For my outer layer is thoroughly dense.
Allow me, then, to celebrate Hypocricy,
Since I am the visible worm of the society,
And I stand confirmed in full stupidity

उर्दू प्रभाग

بسم اللہ الرحمن الرحیم

شطرنج کی چال

نسیم سلطانہ
رونمبر-۲۰۷
بی-اے تھرڈ ایر

اپنے گھر سے پانچ کیلو میٹر کا فاصلہ پیدل طے کر کے جب وہ کالج کے گیٹ تک پہنچا تو جاوید اپنے اسکوٹر لئے میں گیٹ پر کھڑا تھا، انور سنو جاوید کی آواز سے وہ رک گیا جاوید اپنے اسکوٹر سے اتر کر انور کے قریب آتے ہوئے بولا، سوری میں بہت جلدی میں ہوں کلاس شروع ہونے والی ہے۔ انور آہستہ سے کہتا ہوا اپنے کلاس کی طرف روانہ ہو گیا جب کلاس ختم ہوا تو بھی ایک۔ ایک کر کے باہر ہوا جاوید وہی انتظار میں کھڑا تھا اس نے پھر انور کے قریب آتے ہوئے کہا انور آج تم میرے اسکوٹر سے چلو لیکن انور نے انکار کرتے کہا نہیں مجھے کچھ ضروری کام سے جانا ہے اس لئے میں تمہارے ساتھ نہیں جا سکتا انور کمزور جسم کا لڑکا تھا مگر پڑھائی میں پورے کالج میں اسکے مقابلہ کوئی نہ تھا وہ اسکول کے زمانہ سے ہی اپنے کلاس میں پوجیشن حاصل کرتا تھا یہ اسکے بی کا آخری سال تھا وہ ہمیشہ سادے لباس میں کالج آیا کرتا تھا چونکہ وہ غریب ماں باپ کا بیٹا تھا اسکے بانسبت جاوید ایک مالدار باپ کا بیٹا تھا جو ہمیشہ قیمتی لباس اور ساتھ میں گاری بھی رکھتا تھا اس گاری سے روزانہ کالج آیا کرتا لیکن پڑھنے کے معاملہ میں وہ بہت کمزور تھا لیکن وہ اپنے دولت کی وجہ سے اپنے کالج کے بھی لڑکوں کا ہر دلعزیز تھا دوسرے دن جب جاوید نے کالج سے واپسی پر انور کو پھر لفٹ دی تو وہ مجبور ہو کر اسکے اسکوٹر پر بیٹھ گیا کچھ دور چلنے کے بعد جاوید نے اپنے گاری کو ایک نئے راستہ کے طرف موڑ دیا تب سے انور نے جاوید سے مسکرا کر پوچھا دوست کہاں چل رہے ہو جاوید نے ایک زوردار قہقہہ لگاتے ہوئے انور سے پوچھا کیا تم روبی کو جانتے ہو! کون روبی انور نے قلاحیرت کا اظہار کرتے ہوئے کہا ارے یار وہی لڑکی فرسٹ انٹر والی میرے دوست کی بہن کے بارے میں نے تمہیں بتایا تھا اور جاوید کی ہے حد تعریف کرنے لگا اچھا۔ اچھا سمجھ گیا۔ کہو کیا بات ہے انور نے قدرے ٹھہر ہوئے بجھ میں کہا؟ کئی روز ہوئے جب اس نے مجھ سے اپنی اس خواہش کا اظہار کیا تھا کہ وہ تم سے ٹیوشن پڑھنا چاہتی ہے؟ جاوید نے جواب دیا روبی کا نازک سا سراپا اسکے تصور میں رقص کرنے لگا جب سے وہ کالج میں داخلہ کے لئے آئی تھی تب سے انور نے اسے دیکھا تھا تو رانک پر کشش چہرہ پتلے اور نازک سی ہونٹ اور انکی نازک سی کلائی میں نازک نازک سونے کی چوڑیاں بائیں کلائی پر ایک سنہری گھڑی بندھی تھی ان سبھی خیالوں کو انور سنہرے خواب کی طرح دیکھ رہا تھا تبھی جاوید نے اسے چونکا دیا؟ اسمیں سونچنے کی کیا بات ہے جاوید کی پر انور ایکدم چونک پڑا۔

سونچنے کی تو کوئی بات نہیں جب میں ٹیوشن پڑھاتا ہی ہوں تو اسمیں سونچنے کیا بات ہوگی اتنا سننے کے بعد انور نے کہا پھر تمہاری بات بھی تو ٹال نہیں سکتا

اگلی صبح انور روبی کے گھر پہنچا روبی پہلے سے ہی کتاب اور کاپی لئے تیار تھا انور نے پڑھانا سروع کر دیا یہ سلسلہ کافی دنوں تک چلتا رہا لیکن کچھ ہی دنوں کے انور اور روبی کا ایک دوسرا رشتہ قائم ہو گیا اب پڑھانے کے ساتھ۔ساتھ دونو پیار بھری باتیں کرتے اب وہ روبی کے پیار بلکل پاگل ہو چکا تھا اور ساتھ مرنے اور جینے کی قسمیں کھائیں اور اتنے وعدے کئے تھے ایک ساتھ رہنے کے

ایک دن کالج میں اوہ و ادب پر تقریر ہونے والی تھی۔اسکے مقرر میں انور کا بھی نام تھا تقریر ہونے سے پہلے ہی انور اس ہال میں جا بیٹھا جہاں تقریر ہونے والی تھی لیکن روبی ابھی تک نہیں پہنچی تھی جب انور کا نام لیا گیا تو انور اسٹیج پر جا کھڑا ہوا لیکن اسکے چہرے پر خاموشیوں کا طوفان لہرا تھا وہ بلکل گھبرایا ہوا تھا۔جب وہ اچھی طرح تقریر بھی نہیں کر سکا کیونکہ اسکی نگاہیں روبی کو تلاش کر رہی تھی اسکا تقریر مقابلہ بلکل اچھا نہیں تھا اس بات کا احساس انور کو اس وقت ہوا جب اسکی تقریر پر کسی نے بھی تالیاں نہیں بجائی

جب انعامات تقسیم ہونے لگے تو اسمیں انور کا نام نہیں تھا بھی لڑکے لڑکیاں انور کو غور سے دیکھ رہے تھے کیونکہ آج پہلا دن تھا کہ کالج کے کسی فنکشن میں انور انعام سے محروم رہا انور گھبریا ہوا حال کے چاروں طرف گھومتے ہوئے اسٹیج سے باہر نکل گیا اسکی شنشہ نگاہ میں اب بھی روبی کو تلاش رہی تھی لیکن آج روبی گھر سے آئی ہی نو نہیں تھی انور برا اداسی اور مایوسی کی حالت میں روبی کے گھر پہنچا روبی کے گھر کا دروازہ اندر سے بند تھا واپس ہونے ہی والا تھا کہ اسکے گھر سے ایک زوردار قہقہہ سنائی دیا اسکے قدم رک گئے اسنے اندر سے آنے والی آواز کو کان لگا کر سننے کی کوشش کی کمرے کہ اندر سے جاوید اور روبی ہنس۔ہنس کر باتیں کر رہے تھے انور کو اپنے کانوں پر یقین نہیں ہو رہا تھا روبی جاوید سے کہہ رہی تھی کے میرے اچھے جاوید تمہاری شطرنج کی چال کو عملی جامہ پہنانا میرا کام ہے ابھی دیکھتے جاؤں گیا ہو تاہے میری طرف چند دنوں کی الفت کی جال میں پھنس کر آج تقریری مقابلہ میں انعام لینے سے ناکام آرہا اسکی پڑھائی چوپٹ ہو چکی ہے دنیا اسبار وہ میرے چکر میں پھنس کر امتحان میں بھی پھیل ہو جائیگا اور اس کو من کہ جاوید بہت خوش ہوا چونکہ وہ اسکی پڑھائی اور تیزی سے چلتا تھا اسلئے اس نے انور کو باہر کرنے کیلئے شطرنج کی چال چلنے کا فاصیلہ کیا لیکن انکو ساری باتوں سے بہت تکلیف ہوئی کہ دوست تو پھول کے مانند ہوتے ہیں لیکن انور تو کانٹے کی مانند نکلا اور یہ اس شطرنج کی چال میں کامیاب ہو گیا

وحیدہ بانو
رونمبر-۱۲۱
انٹر سکنڈ ایر

بیتے دنوں کی یادیں

تم سے جداھوکر میں نے یہ محسوس کیا
کے تم سے دور رہ کر جینا بہت مشکل ھے
کبھی کبھی تمھاری یاد شدت سے آتی ھے
دل بھر آتا ھے اور آنکھیں بھیگ جاتی ھے

میں دل کے ھاتھوں مجبور
اپنے انسو روک بھی نہیں سکتا
اکثر تنھائی میں بیٹھی میں
بیتے ھوے ان لمحوں کو یاد کرنے لگی ھوں
جن میں ھم ساتھ تھے

وہ دن کتنے پر مسرت اور فرحت بخش ھے
جن میں ھم ساتھ ھنسے اور ساتھ مسکراتے تھے
ان بیتے دنوں کو یاد کرتی ھوں

مجھے ایسا لگتا ھے کہ
تم کہی میرے پاس ھی ھو

میں تمہیں اپنے قریب محسوس کرنے لگتی ھوں
اس احساس سے دل کو
عجب سا سکون ملتا ھے
میرے آنسو تھم جاتے ھیں
اور میرے لب خود بخود مسکرانے لگتے ھیں

★—★

شاھنہ پروین
بی۔اے

آزاد نظم

میں ھوں ایک خواب پریشاں

تم شہزادے
سینوں کے

میں ھوں ایک گمراہ مسافر

تم خوشیوں کے
منزل ھو

میں صحرا کی دھوپ ھوں

ساجن
تم بہار ھو
گلشن کے

تم ایک چاند ھو آسمان کے

میں تو تیری چکور ھوں

کیسے پہنچوں تم تک

ساتھی

تم آکاش
میں دھرتی ھوں

★—★

महाविद्यालय की परिषदें

परिषद	अध्यक्ष	सचिव
हिन्दी साहित्य परिषद	प्रो० विनोद कुमार ठाकुर 'विश्वास	छाया कुमारी
मैथिली साहित्य परिषद	प्रो० रघुनन्दन यादव	साधना कुमारी झा
संस्कृत साहित्य परिषद	डॉ० घनश्याम महतो	विनीता कुमारी सिंह
उर्दू साहित्य परिषद	प्रो० काजी मोहम्मद जावेद	तसनीम सुलताना
फारसी साहित्य परिषद	प्रो० यूनुस अन्सारी	
बंगला साहित्य परिषद	प्रो० शुभ्रा दत्ता	
अंग्रेजी साहित्य परिषद	प्रो० शत्रुघ्न पंजियार	बन्दना कुमारी
गृह विज्ञान परिषद	डॉ० विनोद पंजियार	सुनीति कुमारी
समाजशास्त्र परिषद	डॉ० विनोद प्रसाद अग्रवाल	निशात
मनोविज्ञान परिषद	प्रो० रजनी कुमारी	मनीषा
राजनीति विज्ञान परिषद	प्रो० कल्पना झा	पूनम कुमारी
इतिहास परिषद	प्रो० शिव कुमार दास	पूनम कुमारी
प्राचीन इतिहास परिषद	प्रो० उदय नारायण तिवारी	वन्दना सिंह
दर्शन साहित्य परिषद	प्रो० मीरा दासगुप्ता	कुमारी मृदुला
भूगोल परिषद	प्रो० शुभ कुमार साहु	प्रभा कुमारी
अर्थशास्त्र परिषद	प्रो० अमरकान्त चौधरी	कामना झा
श्रम एवं समाज कल्याण परिषद	प्रो० शान्ता कुमारी	कामना झा
संगीत परिषद	प्रो० पुरोबी दत्ता	ज्योति कुमारी
गणित परिषद	प्रो० देवचन्द्र प्रसाद सिंह	
विज्ञान परिषद	प्रो० नीलम बैरोलिया	संगीता कुमारी
वाणिज्य परिषद	प्रो० सुरेन्द्र प्रसाद साहा	सुनीता कुमारी

एक पुरुष की शिक्षा = एक व्यक्ति की शिक्षा

एक महिला की शिक्षा = एक परिवार की शिक्षा

उच्चतर महिला शिक्षा का प्रवेश - द्वार

रवि प्रिण्टर्स, मधुबनी में मुद्रित।